चन्दामामा
मासिक
50

Photo by Ravinder Kumar Paul

पुरस्कृत परिचयोक्ति

रघुपति राघव राजाराम !

प्रेषक :
रणवीरसिंह चौहान-हैदराबाद

चन्दामामा

सितम्बर १९६०

सुगंध
फैलता है
रेमी
स्नो और
पाउडर
Remy
Remy
Aykan

नाम

उम्र

पत्ता

नं. १०

बिनाका
'रंग भरो' प्रतियोगिता

बच्चो! हर महीने हम तुम्हारे लिये एक नई तस्वीर पेश करेंगें जिस में तुम्हें रंग भरना होगा।

इस प्रतियोगिता को अधिक दिलचस्प बनाने के लिये, सबसे अच्छा रंग भरनेवाले को हम हर महीने इनाम भी देंगे—५० रुपया नक़द!

तो इस तस्वीर में रंग भरकर इस पते पर भेज दोः "बिनाका, पोस्ट बॉक्स : ४३९, बम्बई।"

इस प्रतियोगिता में सिर्फ़ १५ साल की उम्र तक के भारत में रहनेवाले बच्चे ही भाग ले सकते हैं। हमारे जजों का फ़ैसला आख़री होगा और जीतनेवाले को ख़त के ज़रिये ख़बर कर दी जायेगी। याद रहे प्रतियोगिता की आख़री तारीख १५ सितम्बर है। इनाम जीतनेवाले बच्चे का नाम रेडियो सीलोन पर "बिनाका गीतमाला" के हर कार्यक्रम में सुनाया जायगा। ज़रूर सुनिये —हर बुधवार की शाम के ८ बजे, २५ और ४१ मीटर्ज़ पर।

सीबा का लाजवाब टूथपेस्ट

केरोसीन तेल

अब लिटरों में बिकते हैं

पेट्रोल उद्योग ने अब मेट्रिक प्रणाली अपना ली है। पेट्रोल और केरोसीन तेल अब लिटरों में बिकते हैं।

इस प्रकार के परिवर्तन का इनकी कीमतों पर कोई असर नहीं पड़ेगा।

गैलन	लिटर	गैलन	लिटर	लिटर	गैलन	लिटर	गैलन
१	४.५५	२०	९०.९	१	०.२२	२०	४.४
२	९.१	३०	१३६.४	२	०.४४	३०	६.६
३	१३.६	४०	१८१.८	३	०.६६	४०	८.८
४	१८.२	५०	२२७.३	४	०.८८	५०	११.०
५	२२.७	६०	२७२.८	५	१.१०	६०	१३.२
६	२७.३	७०	३१८.२	६	१.३२	७०	१५.४
७	३१.८	८०	३६३.७	७	१.५४	८०	१७.६
८	३६.४	९०	४०९.१	८	१.७६	९०	१९.८
९	४०.९	१००	४५४.६	९	१.९८	१००	२२.०
१०	४५.५			१०	२.२०		

१ गैलन - लगभग ४½ लिटर

मेट्रिक प्रणाली

सरलता व एकरूपता के लिए
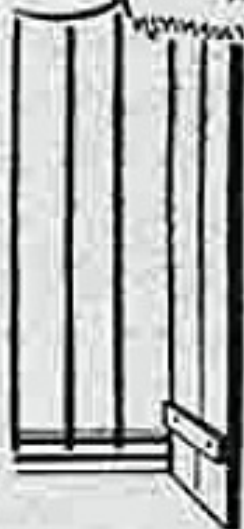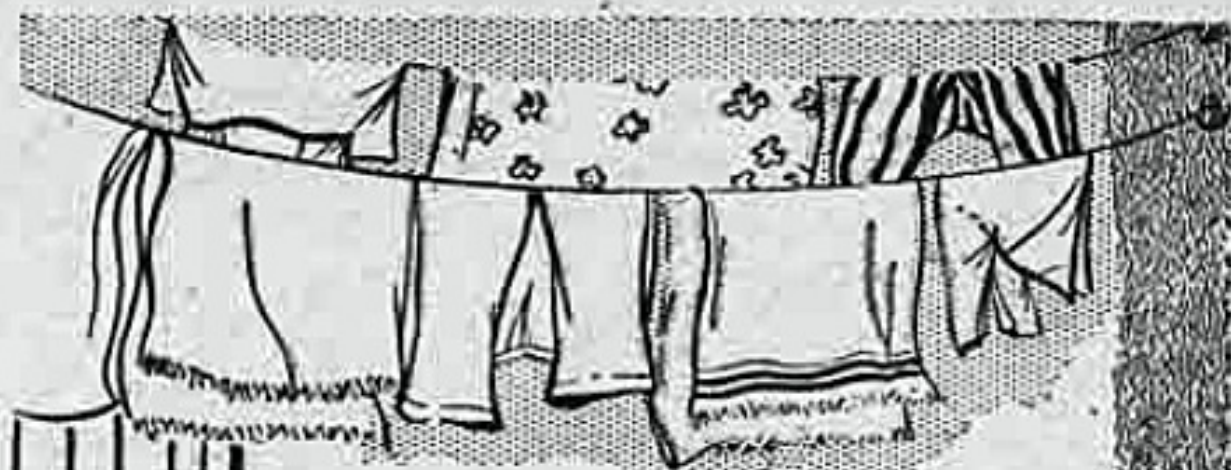
शहरी बहू—गांव में
पिछले साल जब मैंने निर्मला से शहर में ही चुपके से शादी कर ली तो हमारे घर मे एक हंगामा बरपा हो गया। लेकिन फिर आहिस्ता आहिस्ता सारा मामला ठंडा हो गया। आखिर शादी से एक साल बाद मैं निर्मला के साथ गांव गया।
हौले हौले मां निर्मला के सुन्दर मुख और मीठे स्वभाव को देख कर सब कुछ भूल गई। और वह जो एक डर था कि पढ़ी लिखी लड़कियां घर का काम नहीं करतीं, वह भी जाता रहा। निर्मला घर के सारे कामकाज में उसका हाथ बटानें लगी।
सब से बड़ी खुशी मां को यह देख कर हुई कि हौले हौले गाँव की औरतें रोज निर्मला से मिलने आतीं। निर्मला उन्हें दुनिया भर की नई नई बातें बताती।
S/P. 5A-50 HI

मां को सचमुच अपनी पढ़ी लिखी बहू पर बहुत गर्व था।

अभी कल लच्छमी मेरी मां से कह रही थी, "बहन हम तो समझती थी कि पढ़ी लिखी लड़कियां काम की नहीं रहतीं। पर तुम्हारी बहूरानी की तो बात अलग है।"

"काम की क्या कहती हो। अब देखो ना सुबह से कितना काम किया है—खाना बनाया, झाड़ू लगाया, सफाई की, चीजें करीने से रखीं, सिया पिरोया, दो पत्र लिखे और अभी अभी नहाने से पहले यह ढेर सारे कपड़े धोये हैं ......" मां ने बाहर आंगन में रस्सी पर सूख रहे कपड़ों की ओर इशारा करते हुये कहा।

लच्छमी ने उधर देखा "हाय राम, तो क्या इतने सारे कपड़े बहु ने ही धोये हैं? यह चद्दरें भी? और फिर कैसे सफेद और उजले धुले हैं! हमारे धोने से तो मुई मैल ही नहीं जाती। आखिर पढ़ी लिखी लड़की है ना।"

निर्मला ने बाहर आते हुये लच्छमी की बात सुन ली थी कहने लगी "चची इस में पढ़े लिखे होने की क्या बात है। सही किस्म के साबुन से कपड़े धोये जायें तो साफ और उजले धुलेंगे ही।"

"ऐसा कौनसा साबुन है? बेटी हम भी तो सुनें।" लच्छमी ने पूछा।

"सनलाइट साबुन। क्या तुम्हें नहीं पता?"

"क्या यह ऐसा ही बढ़िया साबुन है?"

"हां, सनलाइट से कपड़े खूब सफेद और उजले धुलते हैं क्योंकि सनलाइट जरा सा मलने पर इतना झाग देता है कि इस से कपड़ों के ताने बाने में की मैल बाहर आ जाती है।"

पास बैठी दूसरी औरतों को जैसे किसी नई चीज का पता लग गया हो

तभी मेरी मां ने कहा, "और मजा तो यह कि इस साबुन से कपड़ों को पीटना पटकना नहीं पड़ता। बस जरा सा मलो, कपड़े बिल्कुल साफ। मेहनत तो बचती ही है, कपड़े भी फटने से बचते हैं।"

"पर यह तो महँगा साबुन है" बीच में से एक औरत ने मेरी मां से कहा।

मेरी मां से कोई जवाब नहीं बन पाया।

निर्मला मुस्कराई, "देखा जाये तो यह महँगा नहीं है। असल में यह इतना झाग देता है कि इस से ढेरों कपड़े धुल जाते हैं। अब देखो न यह छोटे बड़े बीस से ज्यादा कपड़े आधी टिकिया से ही धुल गये हैं। इस हिसाब से क्या इसे महँगा कहा जा सकता है?"

"बेटी तुम तो गुणों का गुथली हो। तुम से तो रोज नई नई बातें सीखने को मिलती हैं," लच्छमी ने खुशी से कहा।

S/P. 58-50 HI

हिंदुस्तान लीवर लिमिटेड ने बनाया

चन्दामामा का नवम्बर अंक

इस वर्ष भी दीपावली अंक होगा . . .

. . . . अत्यन्त रोचक व आकर्षक

★ इसमें हमेशा से अधिक पृष्ट होंगे। कितनी ही नई मनोरंजक कहानियाँ होंगी। रंगबिरंगे चित्र, व्यंग्य चित्र ओर अनेक सुपाठ्य स्तम्भ, सुशोभित रूप में इस अंक में दिये जा रहे हैं।

★ यह अंक हिन्दी, तुलुगु, तमिल, कन्नड, मराठी, गुजराती—६ भाषाओं में प्रकाशित होगा।

★ हर किसी अंक का दाम 75 N. P. (१२ आने) होगा।

(पाठक अपनी प्रति के बारे में पहिले ही एजन्ट को कृपया सूचना दें)

★

जानकारि के लिए:

चन्दामामा पब्लिकेशन्स,

वड़पलनी :: मद्रास-२६

न जाने
वे इसमें
क्या
डालते हैं!
यह इतना मधुर और मनपसंद है। सोचता हूँ कि चिल्लाने से तो मिल जायेगा। लेकिन जब माताजी मुझे खिलापिला कर इस की खुराक देती हैं तब मुझे फौरन नींद आ जाती है।
यह ग्राइप मिक्श्चर ... कितना मजेदार है, दिन भर तबीयत मस्त रहती है।
इस में कोई मादक चीज नहीं है और बिल्कुल निरापद है। बच्चों की मरोड़ अम्लता और वायु से आराम देता है।
बाल
शूलार्क
ग्राइप मिक्श्चर
झंडु
फार्मास्युटिकल
वर्क्स लि.
गोखले रोड साउथ, बम्बई

राष्ट्रपति भवन,
नई दिल्ली।
जुलाई २२, १९६०
आषाढ़ ३१, १८८२ शक:

"चन्दामामा" के प्रकाशकों को मैं बधाई देता हूं कि वे गत १३ वर्षों से इस बच्चों की पत्रिका का ६ भारतीय भाषाओं में प्रकाशन कर रहे हैं, जिनमें हिन्दी के अतिरिक्त मराठी, गुजराती, तेलुगु, कन्नड़ और तमिल शामिल है। कहना न होगा कि हमारे साक्षरता प्रसार की सफलता के लिये यह जरूरी है कि उपयोगी बाल साहित्य प्रकाशित होता रहे। "चन्दामामा" के तरुण पाठकों को मैं प्यार भेजता हूं और इस पत्रिका की सफलता की कामना करता हूं।

राजेन्द्र प्रसाद

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

हम कुछ महीनों से "चन्दामामा" में स्तम्भों की वृद्धि करते आ रहे हैं।

हमारा यह प्रयत्न रहेगा कि भविष्य में "चन्दामामा" की पाठ्य सामग्री और भी बढ़ती जाये।

कुछ मास पूर्व हमने "प्रश्नोत्तर" शुरु किया था। इस स्तम्भ में पाठकों ने बहुत-से सुझाव दिये। कई सुझाव उपयोगी भी हैं। हम यथा सम्भव उन सुझावों को कार्यान्वित करने की कोशिश करेंगे। पर हमारी भी कुछ विवशतायें हैं। कागज मिलना अब भी कठिन है। जैसे जैसे ये विवशतायें कम होती जायेंगी, वैसे वैसे हम उन सुझावों को अमल में लाते जायेंगे।

वर्ष : १२ सितम्बर १९६० अंक : १

यह जानकर सैन्धव काँप उठा कि कल सूर्यास्त से पहिले उसे मारने की अर्जुन ने प्रतिज्ञा की है। उसने कौरव वीरों से कहा—"मुझे बचाओ....अर्जुन की प्रतिज्ञा सुनकर पाण्डव अभिमन्यु के निधन के शोक के बदले, कहा जाता है, सन्तुष्ट हो, शंख बजा रहे हैं। अगर आप मेरी रक्षा नहीं कर सकते हैं, तो बता दीजिये, मैं अभी अपने घर चला जाऊँगा। मैं युद्ध नहीं करूँगा।"

"इतने सारे वीर जब हैं, तब तुम्हें, अर्जुन कैसे मार सकेगा? तुम घबराओ मत। सम्भलो।" दुर्योधन ने सैन्धव को हौसला दिया।

"युद्ध में मर जाना तुम्हारा उत्तम धर्म है। तब मृत्यु से तुम क्यों डरते हो? सब को मरना है। कल अर्जुन एक दुर्भेद्य व्यूह बना रहा है। तुम धीरज रखो।" द्रोण ने कहा।

उधर, पाण्डवों के शिविर में कृष्ण अर्जुन को समझा रहा था—"अर्जुन, तुमने बिना भाइयों से परामर्श किये, या मुझसे ही कहे क्यों प्रतिज्ञा की कि कल सूर्यास्त से पहिले सैन्धव को मार दोगे? मैंने गुप्तचरों को भेजकर कौरवों की चाल मालूम कर ली है। कल युद्ध में, कर्ण, कृप, अश्वत्थामा, शल्य, भूरिश्रव, वृषसेन सैन्धव की रक्षा करेंगे। उन छहों वीरों को परास्त करने के बाद ही, तो सैन्धव तुम्हारे हाथ आ सकेगा।"

अर्जुन ने जोश में कहा—"कृष्ण, जो छहों नाम तुमने गिनायें हैं, उन सब का बल मिलाकर मेरे बल से आधा भी नहीं है। द्रोण के सामने ही मैं उस सैन्धव

को मार दूँगा। मैं यह अस्त्र लेकर शपथ करता हूँ। चाहे देवता ही उसकी रक्षा करें, मैं उस पापी सैन्धव को मारकर रहूँगा। कृपा करके मेरे गाण्डीव और अस्त्रों का यों अपमान न करो।" अर्जुन ने कहा।

दोनों कुछ समय तक शोक सागर में डूब गये। अर्जुन ने कृष्ण से कहा—"तुम अपनी बहिन, सुभद्रा और हमारी बहू, उत्तरा को जैसे भी बन सके, आश्वासन दो।" कृष्ण तुरत अर्जुन के शिविर में गया। सुभद्रा का दुख वर्णनातीत था। जो स्त्रियाँ द्रौपदी आदि, आश्वासन देने आई थीं, वे स्वयं शोकग्रस्त थीं। कृष्ण ने अपनी बहिन से कहा—"सुभद्रा! अगर तुम ही इस तरह रोती रही तो बिचारी उत्तरा को कौन आश्वासन दे पायेगा! अभिमन्यु के लिए क्यों रोती हो? वह हम सब के लिए पथ प्रदर्शक और आदर्श पुरुष हो गया है। हम सब उसके आदर्श का पालन करना चाहते हैं। जो उसकी मृत्यु के लिए उत्तरदायी था, उस सैन्धव को कल तुम्हारा पति मारकर तुम्हारी शोकाग्नि शान्त करेगा।" सुभद्रा और उत्तरा को यों समझाकर वह घर चला गया।

कृष्ण उस दिन रात को अधिक सो न सका। वह अर्जुन की प्रतिज्ञा के बारे में ही सोचता रहा। आखिर उसने अपने सारथी दासक से कहा—"देखो, दासक, कल मैं अर्जुन के बदले युद्ध करूँगा। कल तुम ऐसा करना कि सवेरे सवेरे मेरा रथ तैयार रखना, उसमें मेरी गदा, कौमोदकी, शक्ति, चक्र, धनुष, बाण आदि रखना। गरुड़ ध्वज, और छत्र भी ठीक रखना। तुम कवच धारण करके रथ को युद्धभूमि में लाओ। आवश्यकता पड़ने पर मैं अपने पाँचजन्य को जोर से बजाऊँगा। उसकी

ध्वनि सुनते ही रथ लेकर मेरे पास युद्ध-भूमि में चले आना।"

प्रतिज्ञा कैसे पूरी की जाये, इस विषय में सोचते सोचते उस दिन अर्जुन ने एक विचित्र स्वप्न देखा। उसका स्वप्न यों था।

कहीं से कृष्ण, अर्जुन के पास आया। अर्जुन ने उसका स्वागत किया। उसको आसन देकर वह स्वयं खड़ा रहा। कृष्ण ने कहा—"क्यों शोक करते हो? घबराओ मत।" तब अर्जुन ने कहा—"देव, कल ही तो सैन्धव को मारना है! जब कौरव वीर और सम्पूर्ण कौरव सेना, उसकी चारों ओर से रक्षा करेगी तब क्या मेरे लिये उसे मारना सम्भव हो सकेगा!"

"महेश्वर ने तुम्हें पाशुपतास्त्र दिया है। उस महेश्वर का ध्यान करो। उनकी कृपा से तुम्हें वह मिल सकेगा।" कृष्ण ने कहा। यह सुनते ही अर्जुन ने पृथ्वी पर बैठकर, एकचित्त हो कुछ देर तक शंकर का ध्यान किया।

इतने में कृष्ण और अर्जुन आकाश में उड़े जा रहे थे। उत्तर में हिम-पर्वत दिखाई दिये। गंगा नदी, कई प्रकार के वृक्ष, आश्रम, कहीं कहीं गृह-ग्राम दिखाई दिये। आखिर वे कैलाश पहुँचे। जहाँ, शिव और पार्वती और भूत रहते थे। कृष्ण और उसके बाद अर्जुन ने शिव को नमस्कार किया। उसकी स्तुति की।

शंकर ने उन दोनों का प्रेमपूर्वक स्वागत किया। "नर, नारायण जिस कार्य पर तुम आये हो, वह मैं जान गया हूँ। पास ही, सरोवर में मैंने अपना धनुष और अस्त्र रख रखे हैं। जाकर ले लो।" कृष्ण और अर्जुन ज्योंहि उस सरोवर के पास गये और पानी में उतरे, त्योंहि उन्होंने देखा कि एक भयंकर महासर्प सूर्य

की तरह चमचमा रहा था। वहीं सहस्र शिरोंवाला एक और महासर्प था। उससे ज्वालायें निकल रही थीं। दोनों नमस्कार करके शंकर का ध्यान करते खड़े रहे। तब महासर्पोंने अपने सर्पों के आकार को तज दिया। वे उनको धनुष और बाण के रूप में दिखाई दिये।

कृष्ण और अर्जुन उनको लेकर शिव के पास गये। तब शिव के पार्श्व से कुछ प्रत्यक्ष हुआ और वह धनुष और बाणों में जा मिला। अर्जुन ने बड़े ध्यान से देखा कि उस धनुष को कैसे पकड़ा जाता था, कैसे उसपर बाण चढ़ाया जाता था। उसने वह मन्त्र भी भलीभाँति याद कर लिया, जिसका उच्चारण शिव ने किया था। फिर कृष्ण और अर्जुन उस धनुष-बाण को सरोवर में रख और शिव से विदा लेकर वापिस चले आये। इस स्वप्न के पूरा होते होते, अर्जुन को ऐसा लगा, जैसे कोई महान कार्य कर डाला हो, या यकायक कोई महाशक्ति पा ली हो। वह बड़ा आनन्दित हुआ।

कृष्ण दासक से बातें कर रहा था कि रात्रि समाप्त हो गई। सवेरा होते ही युधिष्ठिर के शिविर में गया। उस समय मुख्य राजा युधिष्ठिर को देखने आये। युधिष्ठिर ने कृष्ण से कहा—"यह तुम्हारा दायित्व है कि अर्जुन अपनी प्रतिज्ञा पूरी करे।" कृष्ण ने कहा—"इस पापी सैन्धव को, हम मारकर शृगाल और गिद्धों को सौंप देंगे।"

इतने में अर्जुन वहाँ आया। सबको नमस्कार करके उसने युधिष्ठिर को रात के सपने के बारे में बताया। उनको बहुत आश्चर्य और आनन्द हुआ।

तब सब युद्ध के लिए उद्यत होने लगे। अर्जुन ने सात्यकी से कहा—"सात्यकी,

तुम्हारी यह जिम्मेवारी है कि हम युधिष्ठिर के साथ रहें और उसकी रक्षा करते रहें। जो मेरा भरोसा तुम पर है, वह किसी को नहीं है। सैन्धव को मारने की बात है! वह काम मैं अकेला कर लूँगा। मुझे किसी की सहायता की आवश्यकता नहीं है।"

उस दिन के युद्ध के लिए द्रोण ने अपनी सेना को शकट व्यूह में व्यवस्थित किया। उसने सैन्धव की रक्षा के लिए भूरिश्रव, कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य, वृषसेन, कृप को नियुक्त किया। इन योद्धाओं की रक्षा के लिए एक लाख घुड़सवार, साठ हज़ार रथिकों, चौदह हज़ार हाथियों, इक्कीस हज़ार कवचधारी पदातियों को रखा। यह करके द्रोण ने सैन्धव से कहा—"तुम मेरे पीछे आधे कोस की दूरी पर रहो। तुम्हें कोई डर नहीं। पाण्डव तो क्या, अगर इन्द्र भी आये तो वह भी तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।"

उधर पाण्डव सेना को नकुल के पुत्र शतानीक और धृष्टद्युम्न ने मिलकर एक व्यूह में खड़ा किया। अर्जुन अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए प्रलय की तरह कौरव सेना पर टूट पड़ा। वह अभी शकट व्यूह में प्रवेश करने को ही था कि धृतराष्ट्र के लड़कों में से एक, जिसका नाम दुर्मर्षण था, हाथियों की सेना लेकर उसका मुकाबला करने आया। अर्जुन ने उस सेना को तुरत तहस-नहस कर दिया। इसके बाद दुश्शासन ने एक और सेना लेकर उसका विरोध किया। इस सेना को भी अर्जुन ने नष्ट कर दिया। दुश्शासन बुरी तरह डर गया। वह भी काँपता हुआ शकट व्यूह में द्रोण के पीछे जा मिला।

अर्जुन ने द्रोण के पास जाकर विनय पूर्वक उसको नमस्कार किया। "गुरुदेव!

मैंने प्रतिज्ञा की है कि मैं सैन्धव को मारूँगा। यह प्रतिज्ञा निभाने के लिए मुझे अपनी कृपा से अनुगृहीत कीजिये।"

"मुझे बिना जीते, तुम सैन्धव के पास नहीं जा सकोगे।" द्रोण ने कहा। दोनों ने युद्ध आरम्भ किया। अर्जुन के प्रताप का द्रोण पर कुछ भी प्रभाव न पड़ा। यदि दिन-भर भी युद्ध किया गया, तो ऐसा लगता था कि अर्जुन एक कदम भी आगे न बढ़ पायेगा, कृष्ण ने यह देखकर अर्जुन से कहा—"अर्जुन, यहीं सारा समय व्यर्थ जा रहा है। इस द्रोण से बचकर हमें आगे जाना होगा।" कहकर उसने रथ को एक तरफ़ मोड़ा। फिर आगे ले आने लगा। द्रोण ने अर्जुन का पीछा किया। "अर्जुन, तुम क्यों यों भागे जा रहे हो, जब कि मैं तुमसे युद्ध कर रहा हूँ।"

"महाशय, मैं आपका शिष्य हूँ। पुत्र समान हूँ। क्या मैं आपको जीत सकूँगा!" अर्जुन ने तेज़ी से आगे बढ़ते हुए कहा।

अर्जुन का रथ जल्दी ही सैन्धव सेना के पास पहुँचा। अर्जुन के रक्षकों के रूप में युधामन्यु और उत्तमौज ही साथ थे। अर्जुन का मुकाबला करने के लिए कृतवर्मा,

जय, काम्भोज, श्रुतायु बड़ी सेना के साथ आये। भयंकर युद्ध शुरु हुआ। कृष्ण और अर्जुन बुरी तरह घायल हुए। अर्जुन को एक ओर हानि हुई। वह यह कि कृप ने अर्जुन के रक्षकों को आगे जाने से रोक दिया। इसलिए अर्जुन के रथ मात्र ने ही शत्रु सेना में जाना शुरु किया।

अर्जुन ने उस दिन जितना शत्रु संहार किया, उसके बारे में कहा नहीं जा सकता। कितने ही योद्धा उसके हाथ मारे गये। काम्भोज राजा का लड़का सुदक्षिण, श्रुतायुध और अनेक वीर मारे गये। श्रुतायुध की मृत्यु बड़ी विचित्र थी। यह श्रुतायुध वरुण देव का पर्णाश नदी से पैदा हुआ पुत्र था। वरुण ने उसको एक गदा दी थी, उस गदा के कारण वह अजेय वीर होकर सबको जीतता आ रहा था। परन्तु वरुण ने उसको एक बात बताई थी कि यदि तुमने इस गदा का ऐसे व्यक्ति पर उपयोग किया, जो युद्ध न कर रहा हो, वह गदा उस पर न लग कर, तुम्हारा सिर ही तोड़ देगी। श्रुतायुध यह बात भूल गया। उसने इसको कृष्ण पर फेंका। तुरत वह उसके सिर पर पड़ी और वह स्वयं उसकी चोट से मर गया।

इसके बाद, श्रुतायु और अच्युतायु अर्जुन के साथ लड़ते लड़ते मारे गये। जब उनके लड़के नियतायु और दीर्घायु, अर्जुन से लड़ने आये तो अर्जुन ने उनको यमलोक भेज दिया। इसी प्रकार अम्बुष्ट नाम का व्यक्ति भी अर्जुन द्वारा मारा गया। अर्जुन ने सैन्धव को मारने के प्रयत्न में उस दिन कौरव सेना का जिस प्रकार संहार किया, उसका वर्णन असम्भव है।

[८]

[अमरपाल के साथ जो सैनिक गये थे, उन्होंने भयंकर पक्षियों को जला दिया। फिर खबर मिली कि राजकुमारी कान्तिमति को पालकी में बिठाकर शेर का चमड़ा पहिननेवाले सैनिक कहीं भगा ले गये थे। चित्रसेन और उग्राक्ष अपने सैनिकों को लेकर गये। उन्होंने पालकी रोकी। शेर का चमड़ा पहिननेवालों के सरदार ने राजकुमारी को मारने की आज्ञा दी। बाद में:]

शेर का चमड़ा पहिननेवालों के सरदार ने यों चेतावनी अभी की थी कि एक तरफ़ से चित्रसेन और उसके सैनिक और दूसरी तरफ़ से उग्राक्ष और उसके सैनिकों ने उनपर हमला किया। देखते, देखते राक्षसों की गदाओं की चोट के कारण और चित्रसेन आदि की तल्वारों की मार के कारण वे धूल चाटने लगे। जब उनके सरदार ने यह देखा कि जीतने की कोई गुंजाईश न थी, उसने एक हाथ में तल्वार ली और दूसरे में भाला लिया और भयंकर रूप से लड़ता चिल्लाया—"अब हमारा अन्त समीप आ गया है। पहिले कान्तिमति को मारो।"

उसका यों चिल्लाना सुन चित्रसेन हैरान रह गया। उसे लगा कि राजकुमारी उनके हाथ मारी जा सकती थी। पालकी और उसके बीच लगभग दस शत्रु जी जान से

लड़ रहे थे। उनको मारे बिना वह पालकी तक नहीं पहुँच सकता था।

चित्रसेन सामने के शत्रुओं पर तलवार फेंकता, बगलवाले शत्रुओं की बिना परवाह किये सीधे आगे पालकी की ओर बढ़ा जा रहा था। इतने में पालकी के किवाड़ धड़ाक् से खुले। कान्तिमति बिजली की तरह पालकी से बाहर कूदी। पास में मरे पड़े शत्रु की एक तलवार ली और पालकी के पास आते हुए शत्रुओं का मुकाबला करने लगी।

उग्राक्ष ने ज़ोर से गर्जन किया—"कान्तिमति, देखो मैं आ रहा हूँ। वाह खूब, सचमुच क्षत्रिय कन्या हो। वह शेर का चमड़ा पहिने सैनिकों को इस तरह दूर हटाता अपनी गदा से पालकी के पास गया जैसे वे कोई गेंद हों। इस बीच चित्रसेन भी पालकी के पास पहुँचा। तब उन्होंने कान्तिमति को देखा। उसकी तलवार से खून टपक रहा था।

"ये चित्रसेन महाराजा हैं। मैं उग्राक्ष हूँ। यह सारा जंगल मेरा है।" उग्राक्ष ने कान्तिमति से कहा।

कान्तिमति ने उग्राक्ष की ओर क्रोधभरी दृष्टि से देखा। चित्रसेन की ओर उसने भूलकर भी न देखा। वह झट पालकी में जा बैठी।

राजकुमारी कान्तिमति का व्यवहार देखकर चित्रसेन को गुस्सा आया। अपने प्राणों की भी परवाह न करके वह उन लोगों से लड़ा। उसकी रक्षा की। कृतज्ञता सूचित करना तो अलग, वह मुँह सिकोड़कर अन्दर जा बैठी। चित्रसेन को यह बड़ा अपमानजनक लगा।

"उग्राक्ष! हमारा काम खतम हो गया। अब हमारा सेना के साथ धवलगिरि की ओर जाना अच्छा है।" चित्रसेन ने कहा।
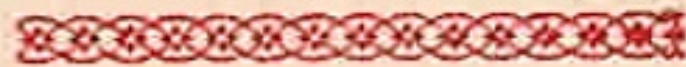
चित्रसेन की बात सुनकर उग्राक्ष चौंका। पहिले की योजना के अनुसार उनको कपिलपुर का किला घेरना था। उस काम पर कुछ देर पहिले एक टुकड़ी लेकर अमरपाल गया हुआ था। पहिले उन्होंने सोचा था कि कपिलपुर के किले को घेरकर राजद्रोही नागवर्मा को मारना होगा। और चित्रसेन अब कुछ और कह रहा था।

"चित्रसेन! पहिले हमें कपिलपुर का किला वश में करना होगा न? सौभाग्यवश हमने रास्ते में ही राजकुमारी को बचा लिया।" उग्राक्ष ने हिचकते हिचकते कहा।

"हम और राजकुमारी की रक्षा? ऊँह, ऐसा लगता है, जैसे उन्होंने ही हमारी रक्षा की हो। अमरपाल ने हमें पहिले ही बताया था कि नागवर्मा ने अग्निद्वीप वालों से मिलकर बीरसिंह महाराजा को पकड़ लिया था और उसको अग्निद्वीप भिजवा दिया था। उस हालत में कपिलपुर को जीतकर हम किसको राजा बनायेंगे?" चित्रसेन ने गुस्से में कहा।

चित्रसेन ने अभी कहना खतम किया था कि कान्तिमति पाल्की से बाहर आई। उसने चित्रसेन की ओर सन्देहभरी दृष्टि से देखते हुए पूछा—"वह अमरपाल कौन है, जिसने आप से कहा है कि मेरे पिता को राजद्रोही नागवर्मा ने अग्निद्वीप भिजवा दिया है?"

"वह कपिलपुर का ही है। पहिले तो वह नागवर्मा की सेना में भरती हुआ। फिर हमें कैदी होकर मिला। कुछ भेद बताकर उसने हमारी सहायता की।" चित्रसेन ने कहा।

"उस अमरपाल ने झूट बताया है। सम्भव है कि वह सच न जानता हो। मेरे पिता किले में ही किसी तहखाने में बन्द हैं।" कान्तिमति ने कहा।

"हाँ, तो ऐसी बात है।" सिवाय आश्चर्य प्रकट करने के चित्रसेन ने कुछ न किया।

"चलो हम उनकी रक्षा करें।" उग्राक्ष ने कहा।

"बिना माँगे हम क्यों किसी की मदद करें? हमसे किसने यह सहायता माँगी है?" चित्रसेन उग्राक्ष पर खौला।

"मैं चाहती हूँ कि आप सहायता करें।" कान्तिमति ने कहा।

"कुछ देर पहिले आपका व्यवहार कुछ और था। आपने मुझे इसतरह देखा, जैसे मैं आपके सामन्त राजा से भी कम हूँ। शायद आप मेरे बारे में कुछ जानते नहीं हैं। अब आप जिस जंगल में हैं, वह सब मेरा है। पास ही जो आश्चर्यजनक महल है और उसके पास जो नगर है, वह भी मेरा है।" चित्रसेन ने गम्भीर ध्वनि में कहा।

राजकुमारी के ओठों पर मुस्कराहट आई। "यह जंगल सारा मेरा है। कुछ देर पहिले ही तो उग्राक्ष ने कहा था।" उसने कहा।

चित्रसेन ने उग्राक्ष की ओर इसतरह देखा, जैसे आँखों से आग फेंक रहा हो। उग्राक्ष स्तब्ध-सा रह गया। उसके मुख से बात तक न निकली। "यह जंगल मेरा ही सही। पर मैं चित्रसेन का आदमी हूँ। इसलिए यह जंगल भी उन्हीं का है।" उसने लम्बा-सा मुँह करके कहा।

"अब मेरा सन्देह निवारण हो गया है। कपिलपुर के राजा, वीरसिंह की इकलौती पुत्री कान्तिमति, मैं चित्रनगर के महाराजा चित्रसेन की सहायता माँग रही हूँ। मेरी यह प्रार्थना है कि राजद्रोही नागवर्मा को उचित दण्ड दिया जाये, जिसने

मेरे पिता को कारागार में बन्द कर रखा है।" बड़े ही आदर से रुक-रुक कर कान्तिमति ने कहा।

कान्तिमति के यह कहते ही चित्रसेन फूला न समाया। उसने उग्राक्ष की ओर मुड़कर कहा—"उग्राक्ष, कम से कम अब तो समझो कि तुम्हारी बढ़ी चढ़ी बातों के कारण कितने सन्देह पैदा हो रहे हैं। अब तो यह कहना बन्द करो कि यह "जंगल मेरा है।" यही नहीं, अभी तुमने कहा था कि तुम महाराजा के आदमी हो। यह गलत है। तुम राक्षस हो और मेरे सेवक हो।"

"सेवक ही हूँ, सेवक ही हूँ।" कहते हुए उग्राक्ष ने कान्तिमति की ओर मुड़कर प्रणाम किया।

कान्तिमति मुस्कराई। चित्रसेन ने इस तरह कहा, जैसे उत्साह उमड़ रहा हो—"लगता है, शेर का चमड़ा पहिनने वालों में कोई जिन्दा भाग नहीं निकला है। अच्छा, तो हम अब सीधे कपिलपुर की ओर चलें। तुममें से चार पाल्की उठाओ।" राजकुमारी कान्तिमति से भी कहा—"राजकुमारी, पाल्की पर सवार होओ।"

कान्तिमति ने सिर एक तरफ़ करते हुए कहा—"महाराज! मैं अब बन्दी नहीं हूँ। इसलिए आपके साथ घोड़े पर सवार होकर मुझे भी आने दीजिये।"

"हाँ, महाराज! यही ठीक रहेगा। आपने तो देखा ही है कि राजकुमारी शत्रुओं से कैसे लड़ी थी।" उग्राक्ष ने कहा।

"अब उनको तल्वार पकड़कर लड़ने की ज़रूरत नहीं है। घोड़े पर सवार हो हमारे साथ आ सकती हैं। कपिलपुर के किले को वश में करना, वीरसिंह महाराजा को विमुक्त करना, यह सब हमारा काम

है। उसके लिए जो लड़ाई लड़नी होगी वह हम और हमारे सैनिक लड़ेंगे।" चित्रसेन ने कहा।

तुरत चित्रसेन, सैनिक, उग्राक्ष और उसके सेवक झुण्ड बना-बनाकर, घोड़ों पर सवार हुए, चित्रसेन और कान्तिमति के पीछे चले। कपिलपुर की ओर चलने लगे। एक घंटे तक सब जंगल के रास्ते पर गये। फिर वे कपिलपुर के किले की दीवार के पास पहुँचे। वह एक पहाड़ की आड़ में था। किले के बुर्जों पर उन्हें दूरी से शत्रु सैनिक दिखाई दिये। उनको किले का पहरा देते हुए, आकाश में दो भयंकर पक्षी भी दिखाई दिये। इन भयंकर पक्षियों को को देखकर चित्रसेन और उग्राक्ष हैरान रह गये। उग्राक्ष ने झट चित्रसेन के पास भागकर कहा—"महाराज! यहाँ भी, हमारा इन भयंकर पक्षियों से पाला पड़ा है। सेना के साथ जिस अमरपाल को भेजा था, उसका पता ठिकाना किसी को नहीं मालूम है। सबको शत्रुओं ने कहीं मार तो नहीं दिया है?"

चित्रसेन को भी इस प्रकार के सन्देह हुए। उसने किले के फाटकों की ओर देखा। वे बन्द थे। उनके सामने कहीं सैनिकों की लाशें न थीं। शायद अमरपाल वहीं कहीं छुपा होगा। शायद उसने सोचा होगा कि किले को वश में करना उसके बस की बात न थी।

चित्रसेन यह सोच ही रहा था कि थोड़ी दूरी पर पेड़ों के पीछे आहट हुई। देखते देखते अमरपाल घोड़े को भगाता भगाता चित्रसेन के पास आया। "देखा महाराज! नागवर्मा जब बड़ी सेना लेकर धवलगिरि पर आक्रमण करने गया तो किले की रक्षा का भी अच्छा प्रबन्ध करता गया। मैं
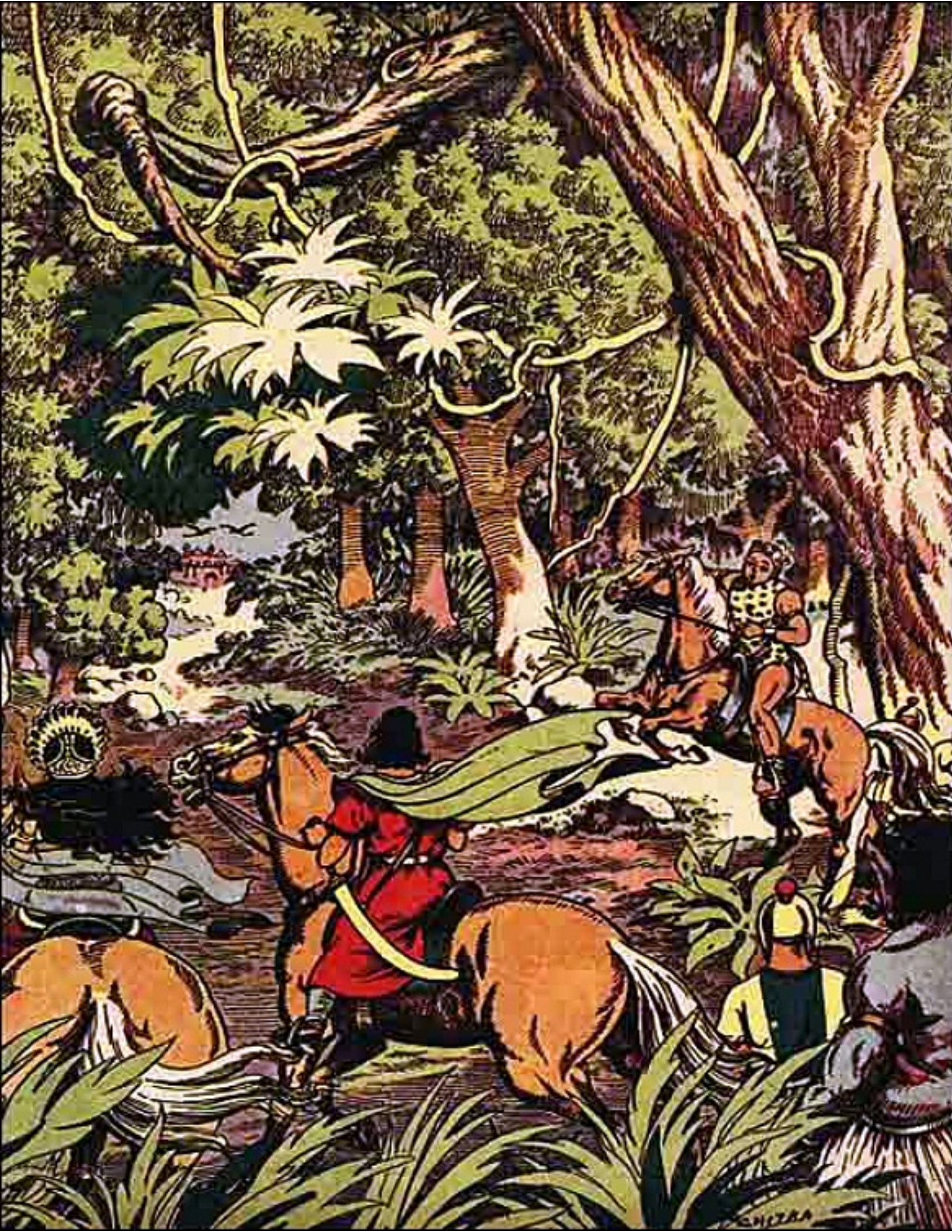
यही अभी तक देख रहा था। वे दो भयंकर पक्षी किले पर गश्त लगा रहे हैं। सिवाय इनके किले में पक्षी शायद नहीं हैं। जो बुर्जों पर पहरा दे रहे हैं, वे भी अधिक नहीं मालूम होते। इस लिए मैंने सोचा कि थोड़ी सेना के साथ हमला करना खतरनाक था और मैं अब तक आपकी प्रतीक्षा करता रहा।"

"अच्छा ही किया। अगर हमला किया होता तो तुम्हारी टुकड़ी तहस नहस कर दी गई होती। अच्छा किया कि हमारी प्रतीक्षा की।" कहते हुए चित्रसेन ने उग्राक्ष की ओर मुड़कर कहा—"उग्राक्ष! अब एक ही रास्ता है। किले के किवाड़ तोड़कर हमें अन्दर जाना होगा। यह काम तुम्हारे सेवक कर सकते हैं?"

उग्राक्ष ने एक बार चित्रसेन की ओर फिर किले पर मंडरानेवाले भयंकर पक्षियों को देखा। फिर सिर खुजाता कहने लगा—"मैं अपने सेवकों में से कुछ को फाटक तोड़ने के लिए, और कुछ को किले की नींव तोड़ने के लिए लगा सकता हूँ। पर, वे भयंकर पक्षी...." वह कहता कहता भय के कारण रुका।

"वे हम पर हमला न करें, इसका जिम्मा मेरा रहा।" अमरपाल ने कहा।

"यह कैसे सम्भव है?" चित्रसेन ने आश्चर्य से पूछा।

"आज सवेरे जब उनके पिंजड़ों में आग लगाई गई थी तब मैं जान सका कि वे आग से कितना डरते हैं। इसलिए हमने यदि अपने आदमियों में हर दसवें को मशाल दी तो वे हम पर हमला करने का साहस न करेंगे, भले ही उनके सवार कितना ही उनको उकसाये।" अमरपाल ने कहा। (अभी है)

पिता के कहने पर...

काशी के पास एक गाँव में जनार्दन नाम का एक गरीब किसान रहा करता था। उसके पास एक घर, आधा बीघा जमीन थी। उसके एक के बाद एक करके सात लड़कियाँ पैदा हुईं। जनार्दन ने खूब मेहनत की। अपने आधी बीघा जमीन में शाक-सब्जी पैदा करता, कमाता। लड़कियों को लाड़ प्यार से पाल पोसकर बड़ा किया। उसे एक ही चिन्ता थी। वह यह कि जब वह बूढ़ा होगा, तो उसकी मदद करने के लिए एक भी लड़का न था और यह भी चिन्ता थी कि इन सब लड़कियों की दहेज दे दाकर कैसे शादी की जाय।

इसके अलावा जनार्दन को अपनी लड़कियों के बारे में कोई फिक्र न थी। जहाँ तक सम्भव था वह अपनी लड़कियों की हर जरूरत पूरी करता। वे भी पिता के साथ खेत में काम किया करतीं। एक बार जनार्दन ने अपने खेत में प्याज पैदा किये। उन्हें लेकर बेचने वह काशी गया। नगर के द्वार पर ही उसे विश्वनाथ दिखाई दिया, जो उसका बचपन का मित्र था। उसने जनार्दन को पहिचान कर कहा—"अरे, बहुत दिनों बाद दिखाई दिये। क्या कर रहे हो? मैंने व्यापार में खूब कमाया और अब तो एक बड़ा मकान भी खरीद लिया है।"

"मैं खेती करके जीवन निर्वाह कर रहा हूँ। मेरे सात बच्चे हैं। चार लड़के हैं, और तीन लड़के" जनार्दन ने अपने मित्र से झूट कहा। जनार्दन यह कहते शर्माया कि उसके एक भी लड़का न था। उसने सोचा कि इस छोटे-से झूट के कहने से क्या बिगड़ता है!

उषा भटनागर

जनार्दन नगर में अपना काम खतम करके घर जा रहा था तो वह सोचने लगा कि मित्र की इच्छा कैसे पूरी की जाये। यदि एक लड़की को लड़के का वेष पहिनाकर भेजा जाये तो समस्या का परिष्कार हो सकता था।

घर जाकर उसने अपनी लड़कियों को एक एक करके बुलाकर जो कुछ हुआ था सुनाया और पूछा—"बेटी, तुम अपने सिर के बाल कटवा लो। लड़के की पोषाक पहिन लो। क्या चार दिन विश्वनाथ के लड़के के साथ रह आओगी?"

छहों लड़कियों ने यह करने से इनकार कर दिया। लड़कियों ने कहा कि बाल कटवाना अशुभ है। लड़कों का वेष पहिनना शर्म की बात है। कोई भी अच्छे घर की लड़की ऐसा न करेगी? अगर कोई ऐसा करेगी तो बाद में उसकी शादी न होगी। क्योंकि जो कुछ उन्होंने कहा था वह सब सच था इसलिये जनार्दन भी कुछ न कह पाया।

परन्तु उसकी सब से छोटी लड़की शशि पिता के कहे अनुसार करने के लिए मान गई। "पिता जी, तुमने जो हमारे

पर यह सुनते ही विश्वनाथ ने कहा—"वाह, क्या मेरा एक उपकार करोगे! मेरा छोटा लड़का कुछ दिनों की बीमारी के बाद अब ठीक हो रहा है, उसके साथ रहने के लिए अपने एक लड़के को भेज दो। तुम्हारी कृपा होगी।"

जनार्दन को न सूझा कि क्या कहे। "अच्छा तो भेज देंगे"। उसने कहा।

"देखने की बात नहीं है। जरूर भेजो। जैसे हम दोनों दोस्त हैं वैसे हमारे बच्चे भी आपस में दोस्त बनेंगे।" विश्वनाथ ने कहा।

लिए कष्ट झेले हैं उनके बदले में मैं कुछ दे नहीं सकती। इसलिये तुम जो कहो, उसे करने के लिए मैं तैयार हूँ।

शशि ने अपने केश कटवा लिये। लड़के की पोषाक पहिनी, चप्पलें पहिनीं, हाथ में लाठी ली और काशी नगर में विश्वनाथ के घर गई।

उसका घर राजमहल की तरह था। विश्वनाथ यह सोच बड़ा खुश हुआ कि उसके बचपन के मित्र ने अपना वचन निभाया था। उसने शशि को अपने सबसे छोटे लड़के सुदर्शन के पास भेजा।

सुदर्शन तभी ठीक हो रहा था। यद्यपि शशि लड़के के वेश में थी, तो भी उसे सन्देह हुआ कि वह लड़की थी। प्रति दिन उसका यह सन्देह बढ़ता गया। शशि हमेशा उससे कुछ कहती रहती। उसकी सेवा शुश्रूषा करती। क्योंकि वह उसके पास थी, इसलिए उसका स्वास्थ्य जल्द ही ठीक हो गया।

पर उसे ऐसा लगा जैसे एक रोग चला गया हो और दूसरा आ गया हो! क्योंकि सुदर्शन को यही न मालूम हुआ कि उसका मित्र एक स्त्री थी, वह उससे प्रेम भी करने लगा। प्रेम को व्यक्त भी न कर पाता था। वह इसी प्रेम के कारण सूखता-सा जाता। वह विचित्र दुविधा में था।

उसकी यह बदलती स्थिति उसकी माँ ने देखी। उसने पूछा—"क्यों इतने दुखी रहते हो? क्या चाहते हो तुम?"

"माँ, जो मेरे साथ रह रहा है, वह सचमुच लड़की है। मैं उससे प्रेम कर रहा हूँ। परन्तु वह, जो लड़कों की तरह घूम फिर रही है, उसके सामने मैं अपना प्रेम कैसे व्यक्त करूँ? मुझे नहीं सूझ रहा है कि क्या करूँ! तुम ही कोई रास्ता बताओ।" सुदर्शन ने कहा।
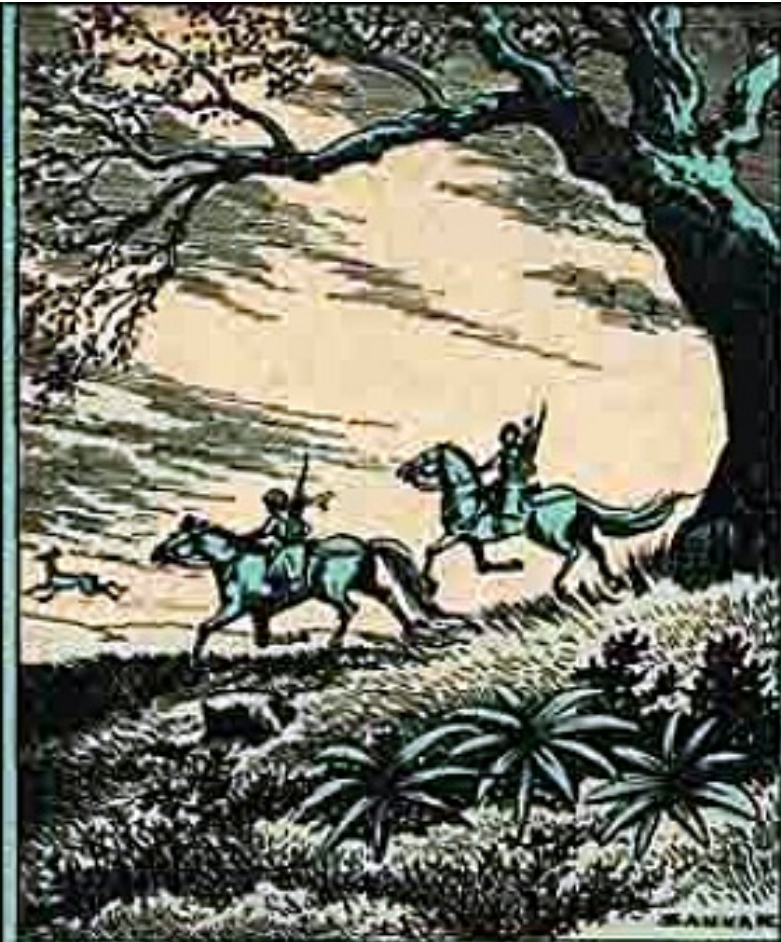
उसपर सवार ही हुई, बल्कि उसने उसे सम्भाल भी लिया। वे दोनों शिकार पर गये। शशि ने सुदर्शन से भी अच्छी तरह शिकार किया। घर आते ही सुदर्शन ने अपनी माँ को सब कुछ सुनाया।

"तुमने कहीं गल्ती तो नहीं की बेटा! शायद वह सचमुच लड़का है।" माँ ने कहा।

"नहीं माँ, लड़का ही है। आज मेरा प्रेम दुगना हो गया है। क्या करूँ?" सुदर्शन ने पूछा।

"वह लड़की है या लड़का, जानने के लिए मैं तरीका बताती हूँ, सुनो। उसे कल मेरे गहने देखने के लिए बुला ला, बाकी सब मैं देख लूँगी।" सुदर्शन की माँ ने कहा।

"अगर वह लड़का सचमुच लड़की हो तो यह बात आसानी से जानी जा सकती है। तुम उसको अपने साथ घुड़सवारी के लिए बुलाओ। अगर कोई ऐसा वैसा घोड़ा दिया तो लड़की उस पर सवारी न करेगी, डरेगी। उसी तरह लड़की धनुष और बाण पकड़ने में भी हिचकेगी। तब सच मालम हो जायेगा और वह मान भी जायेगी कि वह लड़की है।" सुदर्शन की माँ ने कहा।

सुदर्शन ने अगले दिन शशि को शिकार के लिए बुलाया। उसने उसको एक अड़ियल घोड़ा दिया। शशि न केवल

अगले दिन सुदर्शन ने शशि को अपनी माँ के गहने ठीक करने के लिए बुलाया। दोनों गहनोंवाले कमरे में आये, सुदर्शन ने माँ के गहनों के डब्बे खोलकर गहने बाहर निकाले। उन हीरे, मोतियों को, सोने के गहनों को देखकर, शशि की आँखें चौंधिया-सी गईं। उसने सोचा कि राजमहलों में भी उतने गहने न होंगे।

इतने में सुदर्शन की माँ ने उसे बुलाया। सुदर्शन चला गया। तुरत शशि ने उन गहनों में से कुछ निकालकर, पहिनकर देखे। अंगूठी, अंगलियों में पहिनकर देखीं। यह सब परदे के पीछे से सुदर्शन की माँ देख रही थी।

इतने में कुछ आहट हुई। शशि को सन्देह हुआ कि उसे कोई देख रहा था। उसने गले में से हार निकाल दिये। अंगुल्यिों से अंगूठियाँ उतार दीं। बिना कहीं रुके सीधे घर चली गई।

सुदर्शन ने उसको सब जगह खोजा। पर वह कहीं न मिली, सोचा कि वह घर चली गई होगी। "अब क्या किया जाय?" उसने अपनी माँ से पूछा।

"यदि जनार्दन के घर गये तो तुम्हें लड़की अपने असली रूप में दिखाई देगी। जनार्दन से कहो और उसके साथ विवाह कर लो और क्या किया जा सकता है!" माँ ने कहा।

सुदर्शन जब गया तो जनार्दन घर के बाहर चिन्तित बैठा था। "आपका लड़का हमारे घर में किसी को बिना बताये चला आया है। ज़रा बात करनी है। बुलाइये तो।" सुदर्शन ने कहा।

"यहाँ बैठो बेटा, अभी बुलाता हूँ।" कहता, जनार्दन अन्दर गया। तभी शशि ने अपना वेश बदल लिया था और वह अपने गहने पहिनकर बैठी थी। उसने झट अपने गहने उतार दिये। लड़के की पोषाक पहिनकर बाहर आई। परन्तु बिचारी कान की बालियाँ निकालना भूल गई। सुदर्शन उनकी ओर देखकर हँसा। उसने अपने हाथों से कान ढक लिये।

"अब तुम अपना भेद नहीं छुपा सकती। मैंने तुम से शादी करने का निश्चय कर लिया है। चलो हमारे घर चलें।" सुदर्शन ने कहा।

"क्या इस विवाह के लिए तुम्हारे पिता मान गये हैं?" जनार्दन ने सुदर्शन से पूछा।

"नहीं, अगर आप चाहें, तो मेरे साथ आकर मेरे पिताजी से पूछिये।" सुदर्शन ने कहा। उसके साथ शशि और जनार्दन गये।

विश्वनाथ ने सब सुनकर कहा— "तुम्हारी लड़की की मेरे लड़के से शादी हो, भला इससे अधिक मैं और क्या चाहूँगा। पर मैंने तो तुम्हें अपना लड़का भेजने के लिए कहा था। लड़की क्यों भेजी?" उसने जनार्दन से पूछा।

जनार्दन ने सिर नीचा करके कहा— "मेरे लड़के होते, तब न भेजता! अगर तुम्हारे सात लड़के हैं, तो मेरी सात लड़कियाँ ही हैं। यह मैं कहते शर्माया, इसलिए मैंने झूट कहा।"

"अच्छी बात बताई। अपनी लड़कियों का विवाह मेरे लड़कों से कर दो। सब का एक साथ विवाह कर देंगे।" विश्वनाथ ने कहा और बाद में हुआ भी यही।

ये ही रामपुर के छोटे बाबू हैं—बहुत बड़े हार्मोनिस्ट हैं।

अभी आया—बालों पर जरा कंघी फेर लूँ।

ये टिकियायें हैं—सोते समय एक खा लेना, उठते ही एक और निगल लेना।

अरे, ये मास्टर भी क्या हैं, इतना तक नहीं जानते कि दो तिय्ये कितने होते हैं। मुझसे पूछ रहे हैं।

चित्रकार : एस. शंकरनारायण

चारुदत्त

पहिले कभी उज्जयनी नगर व्यापार के लिए प्रसिद्ध था। उस नगर में एक सम्पन्न ब्राम्हण रहा करता था। उसका नाम चारुदत्त था। वह जो कोई कुछ माँगता उसे कभी न न कहता। मित्रों को अनगिनत उपहार देता। पूजा-आराधना के लिए कितना ही खर्च देता। इसलिए वह गरीब हो गया।

उस नगर में वसन्तसेना नाम की एक प्रमुख नर्तकी थी। वह बहुत सुन्दर तो थी ही, बड़ी अक्लमन्द भी थी। एक दिन जब कामदेवोत्सव हो रहा था उसने चारुदत्त को देखा और वह उससे प्रेम करने लगी। उसी समय चारुदत्त ने वासवदत्ता को देखा और वह उससे प्रेम करने लगा। पर दोनों एक दूसरे के प्रेम के बारे में नहीं जानते थे।

एक बहुल षष्ठी की रात को वसन्तसेना गली में चली आ रही थी कि संस्थानक नामक व्यक्ति ने उसका पीछा किया। यह संस्थानक राजा का साला था। इसे हर कोई शकार कहा करता। यह बड़ा मूर्ख और दुष्ट भी था। इस दुष्ट से पीछा छुड़ाने के लिए वसन्तसेना अन्धेरे में भागी और पासवाले घर के बगल के दरवाजे से अन्दर चली गई।

यह चारुदत्त का ही घर था। उसी समय चारुदत्त ने षष्ठी पूजा समाप्त की थी। उसने अपने मित्र मैत्रेय और उसका साथ देने के लिए परिचारिका रदनिका से बाहर जाकर दीप फेंक आने के लिए कहा। रदनिका मैत्रेय के साथ गई। वसन्तसेना ने सोचा कि उसको देखकर वे ज़ोर से बातें करेंगे और बाहर शकार को उसके बारे में मालूम हो जायेगा। यह देख उसने अपने साड़ी के छोर से मैत्रेय के हाथ का दीप बुझा दिया।

यह सोच कि हवा के कारण वह बुझ गया होगा उसे जलाने के लिए वह फिर अन्दर गया। केवल रदनिका ही गली में रही।

शकार देख रहा था कि वसन्तसेना किधर गई थी कि इतने में उसको रदनिका दिखाई दी। उसे ही वसन्तसेना समझकर उसने उसे पकड़ लिया। रदनिका ने शकार को लात मारी और मैत्रेय को पुकारा। मैत्रेय—"यह क्या किया!" कहता दीप लेकर आया। शकार अपनी गल्ती समझ गया। उसने मैत्रेय से कहा—"चारुदत्त से कहना कि मैंने कहा है, वसन्तसेना नाम की नाटकों में काम करनेवाली नर्तकी बहुत से सुवर्ण आभूषण लेकर उसके घर में घुसी है। अगर कल तक मुझे उसे न सौंप दिया गया तो मैं उसका सिर फोड़ दूँगा।"

"तो ऐसी बात है!" कहते हुए मैत्रेय ने शकार के मुँह पर जो रोशनी फेरी तो शकार धीमे से वहाँ से खिसक गया।

इस बीच चारुदत्त ने अन्दर आई हुई वसन्तसेना को देखा। उसने समझा परिचारिका वापिस आई है। "तो दीप फेंक आये हो! इसे अन्दर रखो।" कहते हुए उसने अपना दुपट्टा वसन्तसेना को दिया। उसे जाता न देख चारुदत्त ने पूछा—"क्या सोच रही हो?" वह यह कह ही रहा था कि इतने में बाहर से मैत्रेय और रदनिका अन्दर आये।

मैत्रेय ने चारुदत्त से कहा—"शकार ने तुमसे कहने के लिए कहा है कि वसन्तसेना हमारे घर आई है। अगर तुमने उसे सौंप न दिया तो वह तुम्हें मार देगा।"

तुरत वसन्तसेना ने चारुदत्त के पास आकर कहा—"मुझे बचाइये।"

"क्या बात है, वसन्तसेना!" चारुदत्त ने आश्चर्य से पूछा।

वसन्तसेना उसके घर आई थी और वह इस स्थिति में भी न था कि वह उसका उचित रूप से अतिथि सत्कार करे। बसन्तसेना ने सोचा कि बिना बुलाये वहाँ रह जाना भी उसके लिए उचित न था, ताकि वह फिर चारुदत्त को देख सके, उसने एक उपाय सोचा। उसने चारुदत्त से कहा—"मुझे घर जाना है। अगर ये गहने मेरे शरीर पर रहे तो दुष्ट मेरा पीछा करेंगे। इसलिए इन्हें आप रख लीजिये।"

चारुदत्त इसके लिए मान गया। उसने उसकी आभूषणों की पिटारी मैत्रेय को दिलाई। मैत्रेय न रदनिका को वह पिटारी देते हुए कहा—"तुम इस पिटारी को षष्टी, सप्तमी के बाद अष्टमी के दिन मुझे देना।" फिर चारुदत्त वसन्तसेना को सड़क तक पहुँचा आया। उसे घर पर छोड़ आने के लिए मैत्रेय से कहा।

इसके बाद वसन्तसेना हमेशा चारुदत्त के बारे में ही सोचती रहती। एक दिन एक आदमी डरता घबराता उसके घर आया। उसने उससे शरण माँगी। वह आदमी कभी पाटलीपुत्र में रहा करता था। कभी व्यापार करके खूब कमाया था। मज़े में

ज़िन्दगी बितायी थी। फिर व्यापार में हानि हुई। वह गरीब हो गया। उसने मालिश करना सीख रखा था। उसने उज्जयनी के अमीरों के बारे में बहुतों से सुना था। उन अमीरों की मालिश करके जीवन निर्वाह करने के उद्देश्य से वह आया था। उसको चारुदत्त ने अपने घर रखा। उसका पोषण भी किया। परन्तु चारुदत्त जब गरीब हो गया तो उसके नौकर चाकर भी आश्रयहीन हो गये। मालिश करनेवाला जुए का आदि था। जुए में उसे किसी को दस सोने की मुहरें देनी थीं। जब उसने उस दिन उसको देखा तो उससे बचने के लिए वह वसन्तसेना के घर घुस गया।

वसन्तसेना ने उसकी सारी कहानी सुनी। कर्ज चुकाने के लिए उसने उसको धन देते हुए कहा—"यह समझना कि यह चारुदत्त का ही दिया हुआ है।"

वह आदमी गया ही था कि वसन्तसेना को नौकर भागता भागता आया। उसने एक बात सुनाई। भद्रकपोत नाम का हाथी, झरने से बड़ी तेज़ी से आ रहा था कि उसने काषाय वस्त्र पहिने एक सन्यासी को देखा और उसे गुस्सा आ गया। उसे

सूँड से पकड़कर इधर उधर घुमाया। वहाँ जमा हुए लोग चिल्लाये—"अरे मर गया, मर गया।" उस समय वसन्तसेना का नौकर, साहस करके हाथी के पास गया। उसने उसे मुक्के मारकर भगा दिया, और सन्यासी की रक्षा की। सबने उसकी प्रशंसा तो की, पर किसी ने कोई ईनाम विनाम नहीं दिया। उस समय एक खूबसूरत नवयुवक उस तरफ़ आया। उसने एक अंगूठी देनी चाही। इधर उधर खोजा, पर उसके पास अंगूठी भी न थी। आखिर उसने अपना दुपट्टा उतारकर दे दिया।

"यह रहा उसका दिया हुआ दुपट्टा।" नौकर ने कहा। बसन्तसेना जान गई कि वह दुपट्टा चारुदत्त का था। उस समय चारुदत्त बिना दुपट्टे के गली में चला जा रहा था। जब तक वह आँखों से ओझल न हो गया, तब तक वह उसको देखती रही।

अष्टमी के दिन, आधी रात तक वीणा सुनने के बाद चारुदत्त और मैत्रेय घर वापिस आये। रदनिका ने, मालिक के कहे अनुसार, आभूषणों की पिटारी लाकर दी। चारुदत्त ने उस पिटारी को मैत्रेय से रखने के लिए कहा।

"इसे घर के अन्दरवाले कमरे में क्यों नहीं रखते?" मैत्रेय ने पूछा।

"अरे पगले, क्या तब मेरी पत्नी इसे देख न लेगी?" चारुदत्त ने कहा।

"क्या करें? यह तो मालूम होता है, चोरों के हाथ जाकर रहेगा।" सोचते हुए मैत्रेय ने वह पिटारी ले ली। दोनों सो गये। चारुदत्त तो तुरत सो गया मगर मैत्रेय इधर उधर करवटें बदलने लगा।

उसी दिन रात को चारुदत्त के घर में सेंध लगाकर एक चोर घुसा। उस चोर का नाम सज्जलक था। यह सज्जलक चोर विद्या

जानता तो था, पर उसको वृत्ति न समझता था। उसे वसन्तसेना की दासी मदनिका से प्रेम था। वह उससे दासी का काम छुड़वाकर विवाह कर लेना चाहता था। जब तक कुछ धन लाकर वह वसन्तसेना को न देगा, तब तक वह उसको स्वतन्त्र न करेगी। इसलिए ही सज्जलक चोरी करने निकला था।

परन्तु चारुदत्त के घर में घुसते ही वह जान गया कि वह गरीब घर था। धोखा देकर कमानेवाले व्यापारियों के घर चोरी करने में उसे संकोच न था, पर गरीबों के घरों में वह न जाता। उन पर दया भी करता। वह जानेवाला था कि मैत्रेय ने कहा—"यह आभूषणों की पिटारी ले लो, मुझे न सताओ।"

"आभूषणों की पिटारी" शब्द उसके कानों में पड़ा। उसने देखा कि यह बोलनेवाला व्यक्ति जागा हुआ न था और उसका हाथ सोने की एक पिटारी पर था। तुरत उसने एक डिबिया खोली, उसमें से एक पतंगा-सा निकला और उसने दिया बुझा दिया।

मैत्रेय झट उठा—"अरे दिया बुझ गया। चारुदत्त, अपनी पिटारी ले लो, चारुदत्त, इसके कारण सो भी नहीं पा रहा हूँ। डर के मारे मरा जा रहा हूँ।"

उस अन्धेरे में सज्जलक ने मैत्रेय के हाथ से वह पिटारी ले ली। "अब आराम से सो सकूँगा।" सोचता मैत्रेय फिर सो गया। इतने में सवेरा होने लगा। सज्जलक चला गया।

थोड़ी देर बाद चारुदत्त की दासी रदनिका, चिल्लाती चिल्लाती आई—"मैत्रेय, मैत्रेय, चोर चोर।" "कहाँ है, कहाँ है?" मैत्रेय चिल्लाता उठा। इस "शुभ वार्ता" को चारुदत्त को सुनाकर उसने

कहा—"देखा, मुझे पागल समझते हो! रात में मैंने तुम्हें गहनों की पिटारी देकर कितना अच्छा किया।"

"मुझे कब दी!" चारुदत्त ने पूछा। जल्दी ही पता लगा कि चोर वह पिटारी लेकर चला गया था जिसे वसन्तसेना ने उसके पास रखने के लिए दिया था।

"सब मुझ पर ही सन्देह कर रहे हैं। अगर कोई गरीब यह भी कहे कि कोई चोर उठा ले गया है तो कौन विश्वास करेगा!" जो कुछ गुज़रा था, चारुदत्त की पत्नी को मालूम हुआ। उसके पास एक हार था, जिसकी कीमत लाख रुपये की थी, वह उसे मायके से लाई थी। उसने मैत्रेय को वह हार देकर वसन्तसेना के पास कहला भेजा कि अपने गहनों के बदले वह उसे ले ले। पत्नी की उदारता देखकर चारुदत्त के आखों में आंसू आ गये।

वसन्तसेना घर बैठी-बैठी चारुदत्त का चित्र बना रही थी। इतने में शकार ने उसके लिए गहने और गाड़ी भेजी। जो यह खबर लाई थी, उसे डांट डपट कर वसन्तसेना ने भेज दिया। तभी सज्जलक भी आया। उसने मदनिका को बुलाया।

मदनिका गई। उनकी बातचीत वसन्तसेना के कानों में भी पड़ी।

सज्जलक ने मदनिका से कहा—"तुझे इस दासी वृत्ति से छुड़ाने के लिए चारुदत्त के घर चोरी करके मैं ये गहने ले आया हूँ। इन्हें अपनी मालकिन को दे दो। और स्वतन्त्रता पाले।"

मदनिका ने उस पिटारी को पहिचान लिया। उसने कहा कि वह वसन्तसेना की ही थी।

"अरे, यह भी क्या भाग्य है। अब क्या किया जाये?" सज्जलक ने पूछा।

"चुपचाप, अन्दर जाओ और इसे वसन्तसेना को दो और कहो कि तुम्हारे मालिक चारुदत्त ने इसे भिजवाया है।" मदनिका ने कहा।

इस बीच मैत्रेय भी मोतियों का हार लेकर वसन्तसेना की जगह आया। "तुमने यह सोच कि चारुदत्त भलेमानस हैं, उनके पास अपने गहने रखवाये, गहने उन्होंने जुये में खो डाले। उनके बदले यह मोतियों का हार भेजा है। यह लो।"

"अच्छा तो दे दो।" वसन्तसेना ने कहा।

मैत्रेय गया था मदनिका ने आकर कहा—"मालकिन, आपको देखने के लिए चारुदत्त ने अपना आदमी भेजा है।" सज्जलक अन्दर आया। वसन्तसेना को उसने पिटारी देते हुए कहा—"हमारे मालिक ने आपको यह दे आने के लिए कहा है। उनका पुराना घर है। चोरों का अधिक डर है।"

"इस पिटारी को ले जाकर अपने मालिक को दो और उनसे कहो कि वे इसे कुछ दिन और रखें।" वसन्तसेना ने कहा।

"यह तो मुझसे नहीं होगा।" सज्जलक ने कहा।

"तुम क्यों नहीं कर सकते, यह मैं जानती हूँ। तुम इसे उनके घर से चुरा कर लाये हो।" वसन्तसेना ने कहा। सज्जलक को काटो तो खून नहीं। वसन्तसेना ने मदनिका को गहने दिये। गाड़ी बुलवाकर कहा—"तुम दोनों गाड़ी में जाओ। जाकर विवाह कर लो। क्योंकि तुमने इसे गलत रास्ते से बचाया है, इसलिए तुम इससे विवाह करने योग्य हो।"

उन दोनों के जाने के बाद वसन्तसेना ने चतुरिका नाम की एक और दासी को कहा—"चलो, चारुदत्त के घर चलें, उन्हें उनका मोतियों का हार दे आयें।"

"मालकिन, बड़ी वर्षा होनेवाली है।" चतुरिका ने कहा।

"तुम मुझे जवाब देती हो?" वसन्तसेना ने कहा।

"नहीं, मालकिन, चलिये।" चतुरिका ने कहा। दोनों चारुदत्त के घर की ओर चल पड़ीं।

[५]

कुबलायखान चेन्गोज़खान का वंशज था। वह बड़े खानों में एक था। "खान" का अर्थ, उनकी भाषा में राजाधिराज है। जितना साम्राज्य उसके नीचे था, उससे पहिले किसी और के पास न था। उसके सम्बन्धियों ने बहुत कोशिश की कि वह बड़ा खान न बने। परन्तु कुबलायखान ने उनकी सब कोशिशों पर पानी फेर दिया वह स्वशक्ति से खान बन गया। वह १२५६ में गद्दी पर बैठा।

बड़ा खान बनने के पहिले कुबलायखान हमेशा युद्ध करता रहता। युद्ध में उसने अद्भुत शक्ति-चातुर्य दिखाया। बड़ा खान बन जाने के बाद उसने १२८६ में ही एक बार युद्ध किया। वह यों हुआ कि उसके बन्धुओं में से नयन नाम के व्यक्ति ने एक और सम्बन्धी कायद से साजिश करके बड़े खान पर आक्रमण करके उसके राज्य का कुछ हिस्सा लेना चाहा। इस साजिश के बारे में मालूम होते ही कुबलायखान ने प्रतिज्ञा कि जब तक इन राजद्रोहियों का दमन नहीं करूँगा, तब तक मुकुट धारण नहीं करूँगा। इससे पहिले कि नयन की सेनायें, कायद की सेना से मिल सकीं कुबलाय ने उनको मार डालने की ठानी। वह अपने

घुड़सवार और पदातियों को लेकर युद्ध के लिए निकल पड़ा।

जब बड़े खान की सेना ने आक्रमण किया तब नयन की सेना डेरों में आराम से सो रही थी। उन्हें शत्रु का भय न था। जब तक कुबलायखान की सेना ने डेरों का घेरा नहीं डाला तब तक नयन को वास्तविक स्थिति का पता न लगा। इसके बाद दोनों की सेनाओं में भयंकर युद्ध हुआ। जो युद्ध सवेरे सवेरे शुरु हुआ था, दुपहर तक खतम नहीं हुआ। आखिर विजय कुबलायखान को मिली। नयन पकड़ा गया। वह राजवंश का था। उसका खून ज़मीन पर नहीं गिरना चाहिए था। उसकी मृत्यु सूर्य और चन्द्रमा को नहीं दीखनी चाहिए थी। इसलिए नयन को एक बोरे में डाला गया और उसको मरने तक इधर उधर घसीटा गया। नयन की मृत्यु का समाचार पाते ही कायद ने अपने विद्रोह के प्रयत्न छोड़ दिये। युद्ध के समाप्त होते ही कुबलाय अपनी राजधानी, खान बालिक वापिस चला गया।

कुबलाय राजनीति में भी चतुर था। उसके शासन में मुसलमान, ईसाई और मूर्तिपूजक भी रहा करते थे। नयन ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया था। उसकी ध्वजा पर क्रोस का चिन्ह था। नयन के पराजित हो जाने के बाद बड़े खान के अनुयायियों ने परिहास किया कि क्रोस उनकी रक्षा न कर पाया था। कुबलाय ने उनको समझाया। नयन के ईसाई अनुयायियों से कहा—"नयन के पराजय का कारण यह क्रोस बिल्कुल नहीं है। क्रोस धर्म की रक्षा करता है, अधर्म की नहीं। विद्रोह के लिए षडयन्त्र करके नयन ने अधर्म के पथ पर पैर रखा था इसलिए क्रोस ने

उसकी रक्षा न की।" इन बातों से ईसाई योद्धा सन्तुष्ट हुए।

कुबलायखान की चार पत्नियाँ थीं। वे सब महारानी के पद पर थीं। उनमें से किसी एक का भी लड़का, बड़ा खान बनने का अधिकारी था। हर रानी का अपना अलग दरबार और दस हज़ार तक नौकर चाकर हुआ करते थे। कुबलायखान के चारों रानियों से बाईस लड़के थे। इनमें से बड़े का नाम, उनके परदादा का था, यानि चेन्गेज़खान। क्योंकि वह असमय में मर गया था इसलिए इसका लड़का तैमूर, कुबलाय के बाद बड़ा खान बना। यही नहीं, उपपत्नियों से कुबलायखान के पच्चीस लड़के थे। इन बच्चों के पास छोटी छोटी रियासतें और जागीरें थीं।

काथै देश का मुख्य नगर खान-बालिक था। यहाँ बड़े खान का एक बड़ा किला था। उसके परकोटे, जिधर देखो उधर मीलों दूर चले गये थे। उसके अन्दर एक और परकोटा था। इसके अन्दर राजमहल था। यह दस बालिश्त ऊँचे संगमरमर के चबूतरे पर बना एक मँजिला महल था। इसमें एक ऐसा हॉल था, जिसमें एक साथ छः हज़ार आदमी बैठकर खा सकते थे। इसमें असंख्य कमरे थे। इस महल के पिछवाड़े के कमरों में बड़े खान के सोना, चान्दी, हीरे मोती के ढेर रखे होते थे। इस किले के आँगन में बड़े खान ने एक बड़ा-सा टीला बनवाया। उसपर उसने सदा बहार पेड़ लगवाये। पेड़ों के बीच उसने हरे रंग का महल बनवाया। इसलिए वह टीला हमेशा हरा रहता और आँखों को बहुत भाता।
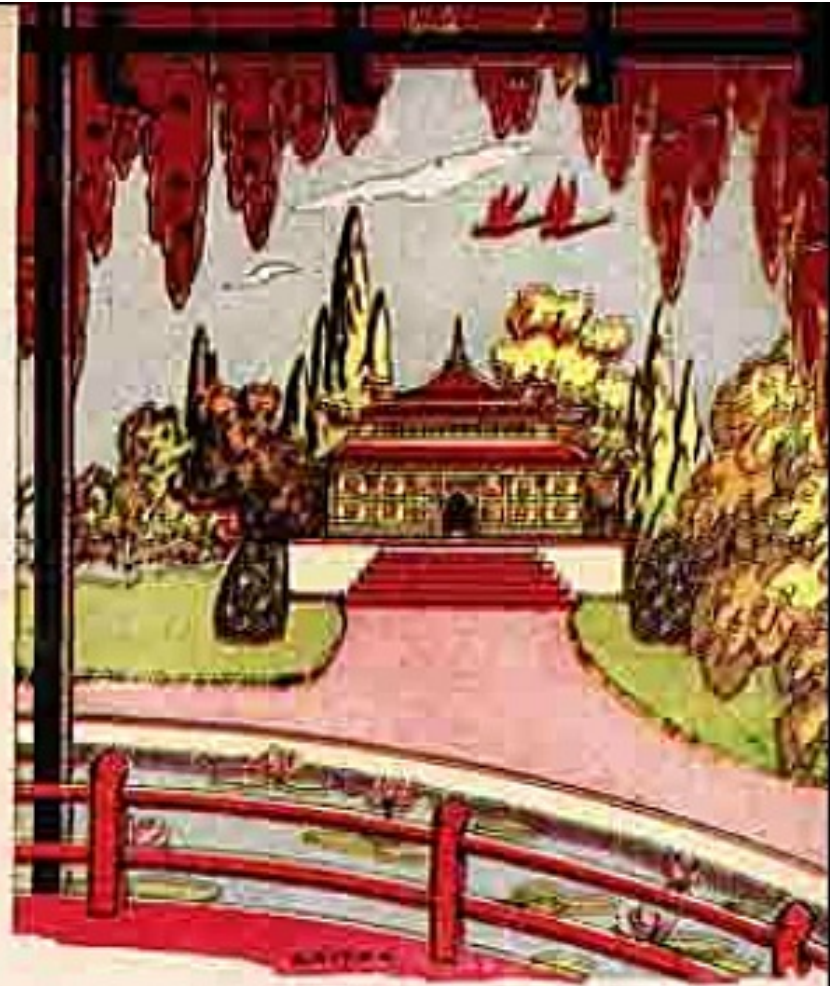
बड़ा खान खान-बालिक में साल में तीन महीने ही रहा करता था। बाकी समय में, अहमद नाम का शासक नगर पर

शासन किया करता था। यह अहमद बड़ा दुष्ट था। इसने कई सुन्दरियों को कैद कर रखा था। वह जिनको चाहता उनको नौकरी देता, जिनको नहीं चाहता, उनके सिर कटवा देता। क्योंकि बड़े खान को इस पर पूर्ण विश्वास था इसलिए इसने बाईस वर्ष तक जनता को सताया। उसने अपना निरंकुश शासन जारी रखा। इसके बाद वान हू चेयेन हू नाम के दो काथे के नागरिकों ने उसको मारने के लिए षड्यन्त्र सोचा। बड़ा खान, और उसका बड़ा लड़का, खान-बालिक में न थे। मौका देख एक दिन रात को वान हू राजमहल में घुसा, अपने चारों ओर उसने खूब रोशनी करवाई। उसने अहमद के पास खबर भिजवाई कि युवराज चिन्गेज़खान तभी आये थे, और उसको बुला रहे थे। अहमद राजमहल में आया उस रोशनी में उसकी आँखें चौंधिया गईं। अहमद ने वान हू को चेन्गेज़खान समझकर, उसके सामने घुटने टेके तुरत चियेन हू ने तल्वार से अहमद का सिर काट दिया। परन्तु षड्यन्त्रकारी सैनिकों के हाथ पकड़े गये। वान हू सिंहासन पर ही था कि बाण की चोट खाकर मर गया।

बड़ा खान, खान-बालिक आया। उसने जब तहकीकात करवाई, तो अहमद और उसके पचीस लड़कों के कारनामों की पोल खुली। उसने अहमद की लाश कुत्तों को खिल्वायी और उसने जो कुछ कमाया था, उसे अपने आधीन कर लिया।

ये सब घटनायें, जब मार्कोपोलो उस नगर में था, तभी हुईं।

अमृत मंथन

इन्द्र साथियों को ले अपने
लगे छानने वन की खाक,
भूख सताती जब उनको तो
खाते कंद-मूल या शाक।

दुख का कोई अंत नहीं था
व्याकुल थे देवों के प्राण,
दैत्यों के भय से उन सबको
कहीं नहीं मिल पाया त्राण।

आंगिरस ने कहा इन्द्र से—
"विनय यही मेरा देवेश!
लक्ष्मीपति की कृपा बिना अब
मिट न सकेंगे ये सब क्लेश।

करें यज्ञ अब आप कि जिससे
कृपा करें हमपर भगवान,
इसके सिवा नहीं है चारा
क्योंकि दैत्य हैं अति बलवान।"

यह सुन करके इन्द्रदेव ने
यज्ञ सैकड़ों पूर्ण किये,
जिससे खुश होकर ब्रह्माजी
प्रकट वहां पर स्वयं हुए।

ब्रह्माजी को देख सामने
किया इन्द्र ने उन्हें प्रणाम,
और कहा—"हे चतुरानन प्रभु!
रहे नहीं अब हमसे धाम।

कृपा आपकी मिले अगर तो
रह न सकेंगे हम यों दीन,
आह, हमारा सुख औ' वैभव
लिया सभी दैत्यों ने छीन।

हुए प्रसन्न हैं अगर आप तो
दें हमको अब यह वरदान,
मिले स्वर्ग फिर वापस हमको
दैत्यों से भी हों बलवान।"

महेशनारायण सिंह

सुनकर यह बोले ब्रह्माजी—
"धीरज तुम्हें अभी धरना है,
समय अभी ऐसा है जिसमें
ठीक न दैत्यों से लड़ना है।

तुम सबके कष्टों का कारण
है दुर्वासा मुनि का शाप,
भोग रहे हो कुफल आज तुम
अपनी ही करनी का आप।

दैत्यों का तो राजा है बलि
जिसे न तुम जीत सकोगे,
उससे करके वैर अभी तुम
अपना ही अनचीत करोगे।

प्रह्लाद है बलि का दादा
भक्तों का है वह सिरमौर,
धर्मात्मा उसके जैसा अब
नहीं धरा पर कोई और।

प्यारा है वह महाविष्णु का
उसका अहित करेगा कौन,
कृपा अमित बलि पर भी उनकी
अतः तुम्हें रहना है मौन।

फिरभी अभी नहीं दो मन में
अगह निराशा को तुम लेश,
चलो शरण में महाविष्णु की
वे ही हर सकते सब क्लेश।"

इतना कहकर ब्रह्माजी ने
लिया इन्द्र को अपने साथ,
दोनों लगे तपस्या करने
दिव्य हिमालय पर जा साथ।

बीती जब कुछ अवधि, एक दिन
फैला सहसा दिव्य प्रकाश,
कोटि कोटि सूर्यों का जैसे
चमक उठा हो सहसा हास।

और तभी गरुड़ के पंखों
की पड़ी सुनायी वह आवाज़
जिससे कंपित हुई दिशाएँ
काँप उठे वन के गजराज।

महाविष्णु थे चढ़े गरुड़ पर
धीरे धीरे प्रकट हुए,
इन्द्र और ब्रह्माजी मन में
तप का फल पा धन्य हुए।

कहा चतुर्मुख ब्रह्मा ने तब—
"हे प्रभो, आप हैं दयानिधान,
इच्छा पूरी करें इन्द्र की
देकर मनचाहा वरदान।

दैत्यों के कारण पृथ्वी पर
मचा हुआ है हाहाकार,
देवों को दें शक्ति कि जिससे
फिर न बनें यों वे लाचार।"

बोले विष्णु—"विधाता, सुनिये,
समय नहीं है यह अनुकूल,
दैत्यों से लड़ देव करेंगे
अपना ही सब कुछ प्रतिकूल।

दैत्यों से करके मैत्री अब
क्षीरोदधि मथना है पहले,
औ' फिर देवों को पाना है
अमृत जो उसमें से निकले।

अमृत जो पीकर देव सभी जब
अनायास ही अमर बनेंगे,
तब ही आकर वे दैत्यों को
सम्मुख रण में जीत सकेंगे।"

इतना कहकर महाविष्णु तब
पल में अन्तर्धान हुए,
ब्रह्माजी भी उनके पीछे
पल में अन्तर्धान हुए।

इन्द्र हृदय में डरते डरते
चले दैत्य राजा के पास,
आशा कभी हृदय में जगती
कभी बहुत होते उदास।

उन्हें देखते ही दैत्यों ने
जंजीरों से जकड़ दिया,
और उन्हें आनन-फानन में
बलि के आगे खड़ा किया।

किया प्रणाम इन्द्र ने बलि को
और कहा—"सुनें दैत्यराज!
ब्रह्माजी औ' महाविष्णु ने
मुझे यहाँ भेजा है आज।

मिलकर यदि सब दैत्य देवता
करें क्षीरसागर का मंथन,
तो निकलेगा अमृत उससे
जिससे रहता अक्षय जीवन।

वैर भाव सब भूल पुराना
हमें मित्र अब बनना है,
अमृत पीकर हम सबको ही
अमर यहाँ पर बनना है।"

बलि राजा यह सुनकर बोले—
इन्द्र, मुझे यह है स्वीकार,
क्षीरोदधि का मंथन कर हम
अमृत लायेंगे इस बार!"

इतना कहकर बलि ने तत्क्षण
दिया दैत्यगण को आदेश,
"जाओ, मथो सभी सागर को
साथ रहेंगे ये देवेश।"

राजा की पाकर के आज्ञा
किया दैत्यों ने जयजयकार,
जिसको सुनकर काँपी धरती
लगे डोलने सभी पहाड़।

वज्रदत औ' कालकेतु से
थे भीषण दैत्यों के नाम,
नाम भयंकर उनके जैसे
वैसा ही तो था आकार।

चले दैत्य सब सागर मथने
करते भीषण गर्जन शोर,
बढ़े देवता भी सब आगे
महा क्षीरसागर की ओर!

समुद्र के राजा की कृपा

रूस के नवगोरद नगर में एक गायक रहा करता था। उसका नाम था साद्को। नगर में यदि किसी धनी के घर दावत वगैरह होती, तो उसे बुलाया जाता। वह उनको वीर गाथायें सुनाकर आनन्दित करता। इस तरह उसको दावत तो खाने को मिलती ही, साथ कुछ पैसे भी मिलते।

साद्को गरीब था, तो भी उसे प्रायः रोज कोई न कोई बुलाता। परन्तु उसे एक दिन किसी ने न बुलाया। इसलिए उसे उस दिन-भर भोजन न मिला। वह उस दिन तम्बूरा लेकर नगर के पासवाले सरोवर के पास गया। उसके किनारे बैठकर वह गाने लगा।

वह गा रहा था कि उस शाम को एक आश्चर्यजनक बात हुई। सरोवर में बड़ी बड़ी तरंगे उठने लगीं। जल कल्लोलित हो उठा। यह देख साद्को घबरा गया। वह वहाँ से भाग निकला। रात होने से पहिले नगर पहुँच गया।

वह रात बीती। अगले दिन भी साद्को को किसी ने न बुलाया। इसलिए वह अपना तम्बूरा लेकर फिर झील के पास गया और गाने लगा। फिर शाम को जल में उपद्रव-सा होने लगा। साद्को फिर भयभीत होकर घर भाग आया।

तीसरे दिन साद्को को किसी ने न बुलाया। तीसरे दिन भी झील में बड़ी-बड़ी तरंगें उठने लगीं। परन्तु साद्को ने यह देखा नहीं।

इतने में उसके सामने आकाश में कोई आकृति उठी। उसे देखकर मानों साद्को को काठ मार गया।

"बेटा, मैं समुद्र का राजा हूँ। तीन दिन से मैं और मेरे अतिथि यहाँ सहभोज कर रहे थे। तीनों दिन तेरे गीतों ने हमें आनन्दित किया। इसके बदले तुम्हारा उपकार करने मैं यों आया हूँ। कल से तुम यथारीति धनियों के घर बुलाये जाओगे। कल ही एक धनी के घर दावत होगी। उसमें नगर के करोड़पति, लखपति व्यापारी उपस्थित होंगे। सब खूब खा-पीकर शेखियाँ मारेंगे। तब तुम भी एक बात कहना कि झील में सुनहले पंखोंवाली मछलियाँ हैं। पर तुम्हारी इस बात पर कोई विश्वास नहीं करेगा। वे बाजियाँ लगायेंगे। उनको मान जाना। फिर तुम पतले रेशम के धागों से बने एक छोटे से जाल को झील में डालना। यह मेरी जिम्मेवारी रहेगी कि उसमें सुनहले पंखोंवाली मछलियाँ पड़े। तुम इस तरह बाज़ी जीतकर धनी हो जाना।"

उसके अन्तर्धान होते ही सादको अपना तम्बूरा लेकर घर वापिस चला गया। जैसा कि समुद्र के राजा ने कहा था, वैसा ही सादको को एक राजा के घर निमन्त्रण मिला। वहाँ दावत हुई। उसमें नगर के करोड़पति और समुद्र पार व्यापार करनेवाले व्यापारी आये।

दावत के समय सादको ने गीत गाये। उनको सुनकर सब तन्मय-से हो गये। फिर अतिथि खूब शराब पीने लगे। एक से बढ़कर एक शेखियाँ मारने लगा। एक ने अपने मकानों के बारे में। एक ने अपनी पत्नी के सौन्दर्य के बारे में। एक ने अपने बल-पराक्रम के विषय में शेखियाँ मारीं। एक दूसरे की होड़ कर रहे थे।

सादको सबकी बातें सुनता चुप बैठा रहा।

"सब बातें कर रहे हैं, पर सादको क्यों नहीं बात करता?" किसी ने पूछा।

"आप सब शेखियाँ मार रहे हैं, शेखियाँ मारने के लिए आपके पास बहुत कुछ है भी। पर मैं किस बात की शेखी मारूँ? मेरे पास कुछ भी नहीं है। पर मैं एक ऐसी बात जानता हूँ, जिसे आप में कोई नहीं जानता है।" सादृको ने कहा।

"क्या है वह? क्या है वह?" सबने पूछा।

"हमारे नगर के पासवाली झील में सुनहले पंखोंवाली मछलियाँ हैं।" सादृको ने कहा।

इस बात पर किसी को विश्वास न हुआ। कई ने कहा कि वह झूट था। किसी और ने कहा कि सादृको ने यह बात झूटमूट गढ़ी था।

कई ने कहा कि रोज उस झील में मछियारे मछलियाँ पकड़ रहे हैं, पर कभी किसी को सुनहले पंखोंवाली मछली नहीं मिली।

"मैंने झूट नहीं बोला है। सच ही कहा है।" सादृको ने कहा।

"अगर तुमने यह साबित किया कि झील में सुनहले पंखोंवाली मछलियाँ हैं, तो

मैं अपने शहर की सारी दुकानें तुम्हें दे दूँगा।" एक व्यापारी ने कहा।

बाकी व्यापारियों ने भी वही बात कही और बाज़ियाँ लगाईं।

"मेरे पास बाज़ी लगाने के लिए सिवाय मेरे सिर के कुछ नहीं है। अगर यह साबित किया गया कि झील में सुनहले पंखोंवाली मछलियाँ नहीं हैं तो मैं अपना सिर दे दूँगा।" साद्को ने कहा।

सब यह मान गये और झील के पास गये। साद्को रेशम के तागों से बना एक छोटा-सा जाल साथ लेता गया।

उसके साथ जो व्यापारी आये थे, उनको साद्को ने किनारे पर खड़ा कर दिया।

साद्को पानी में उतरा। उसने जाल फेंका और फिर निकाला। वह देखता क्या है कि उसमें सुनहले पंखोंवाली एक मछली छट-पटा रही थी। सब उसको देखने लगे।

"इसमें ज़रूर कुछ धोखा है।" व्यापारियों ने कहा।

यह दिखाने के लिए उसमें कोई धोखा नहीं है साद्को ने वह मछली जाल में से निकाल दी, फिर जाल पानी में फेंका। जब जब उसने जाल खींचा तो उसमें सुनहले पंखोंवाली एक और मछली थी।

इस प्रकार साद्को ने कई बार झील में जाल फेंक कर निकाला, हर बार उसमें सुनहले पंखोंवाली मछली मिली।

नगर के व्यापारियों को बाज़ी हारनी पड़ी। उन्होंने अपनी सारी दुकानें साद्को को दे दीं। वह उस नगर का सबसे बड़ा व्यापारी बना। उसने विदेशों से भी व्यापार किया। वह संसार में सबसे बड़ा धनी हो गया।

हमारे देश के आश्चर्य:

कोणार्क का सूर्य मन्दिर

कोणार्क का सूर्य मन्दिर (उड़ीसा) हमारे देश के आश्चर्यों में से एक है। यह पुरी से, ईशान्य में ५३ मील की दूरी पर है। पुरी से यहाँ सड़क जाती है। भुवनेश्वर से भी यहाँ आया जा सकता है। यह रास्ता केवल चालीस मील ही दूर है।

पुरी जगनाथ जी के मन्दिर को सफेद मन्दिर और सूर्य के मन्दिर को काला मन्दिर कहते हैं।

इस मन्दिर को १२३८-१२६४ ई. के मध्य में प्रथम नरसिंहदेव ने बनवाया था। एक समय में यह मन्दिर बहुत बड़ा रहा होगा क्योंकि यद्यपि सारा मन्दिर खण्डहर हो गया है—पर जो अग्रभाग आज शेष रह गया है, वह ही बहुत विशाल है। दूर दूर से दिखाई देता है।

इस मन्दिर में सिंह और हाथियों की कई आश्चर्यजनक मूर्तियाँ उनके वास्तविक आकार और परिमाण में बनी हुई हैं।

विशेषज्ञों का कहना है कि इस प्रकार की मूर्तियाँ व शिल्प व यथार्थता, किसी भी हिन्दू मन्दिर में नहीं दिखाई देते।

पुनर्विवाह

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। पेड़ के पास गया। शव उतारकर कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"वचन निभाने में तुम जितनी लगन दिखा रहे हो, अगर और भी दिखायें, तो कितना अच्छा होगा! उदयसेन की लड़की सुजाता तक ने पुनर्विवाह कर लिया था। वह बड़ी शीलवती थी। तुम्हें थकान न हो इसलिए उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

वज्रशिला नगर में उदयसेन नाम का एक उत्तम कुलीन क्षत्रिय रहा करता था। उसके एक लड़की थी, जिसका नाम सुजाता था। जब वह सयानी हुई तो उदयसेन उसके लिए उपयुक्त वर खोजने लगा। जब उसे कोई उपयुक्त वर न मिला, तो वह

चिन्तित रहने लगा। परन्तु पुरन्दर नाम के एक मामूली क्षत्रिय को सुजाता से प्रेम था। वह उससे विवाह करना चाहता था। उसने उदयसेन से बातचीत की, उसके सामने उसने अपनी यह इच्छा प्रकट भी की। परन्तु उदयसेन को अपनी लड़की उसे देना बिल्कुल पसन्द न था। "तुम्हारा वंश क्या है? तुम्हारी हैसियत कितनी है? मेरी लड़की या तो किसी राजकुमार से शादी करेगी, नहीं तो किसी वीर सेनापति से। तुम जैसे अनामक से उसका विवाह कभी न होगा।" उसने पुरन्दर से कहा।

परन्तु पुरन्दर हताश न हुआ। उसने सुजाता को उसकी दासी द्वारा अपनी इच्छा के बारे में बताया। सुजाता ने सोचा प्रसिद्ध व्यक्ति से विवाह करने की अपेक्षा उससे विवाह करना अच्छा था, जो उससे सचमुच प्रेम करता था। क्योंकि पिता सब के सामने उससे विवाह करना न पसन्द करेंगे, इसलिए वह चुपचाप कहीं जाकर उससे विवाह करने के लिए तैयार हो गई।

यह पता लगते ही पुरन्दर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने विवाह के लिए मुहूर्त निश्चित करवाया। वज्रशिला नगर से छः मील की दूरी पर घने जंगल में काली का मन्दिर था। वहाँ उसने विवाह का प्रबन्ध किया। सुजाता को भी उसने इसकी सूचना पहुँचा दी।

पुरन्दर विवाह का प्रबन्ध करने के लिए एक और गाँव गया। विवाह के दिन शाम को उसने पुरोहित, एक विवाहित स्त्री, कहारों के साथ एक पालकी काली के मन्दिर में भिजवाई। उस गाँव से काली का मन्दिर १२ मील दूर था। वह अन्धेरा होने के बाद घोड़े पर सवार हो काली

के मन्दिर की ओर निकला। मुहूर्त आधी रात के बाद था।

उस दिन शाम को रोज की तरह सुजाता ने भोजन किया और अपने कमरे में जाकर लेट गयी। उसने रोशनी बुझा दी। लेकिन वह सोई नहीं। जल्दी ही उसकी दासी ने खिड़की के पास आकर कहा—"मालकिन, घोड़ा तैयार है। सब सो रहे हैं।" सुजाता बाहर गई। वह और दासी घोड़े पर सवार हो काली के मन्दिर की ओर गईं। वे काली के मन्दिर के पास पहुँचनेवाली थीं कि जोर से आन्धी आई, उसके साथ वर्षा भी होने लगी।

जब यह आन्धी शुरु हुई तभी पुरन्दर जंगल में घुसा था। तूफ़ान में पेड़ों के गिर जाने के कारण रास्ता न मालूम होता था। जैसे तैसे रास्ता बनाता, वह घोड़े को आगे बढ़ाता गया। परन्तु तूफ़ान के बढ़ने के कारण आगे बढ़ना असम्भव हो गया। न मालूम वह उस जंगल में कितनी देर भटकता रहा। घोड़ा थक गया। यह सोच कि सारे प्रयत्न विफ़ल होंगे, वह भी निराश हो गया।

थोड़ी देर बाद तूफ़ान रुका और पूर्व में उषा आई। उस झुटपुटे में सारा जंगल भयंकर लगा। वह जैसे तैसे सूर्योदय तक काली मन्दिर में पहुँचा। वहाँ कोई न था।

परन्तु उस रात में काली के मन्दिर में सुजाता का विवाह हो गया था। सब इसी चिन्ता में थे कि विवाह का मुहूर्त गुज़रा जा रहा था कि उस समय एक युवक घोड़े पर सवार होकर आया। उसके कपड़े बिल्कुल भीगे हुए थे। लोगों ने कहा—"वर आ गया है। वर आ गया है।" टिमटिमाते दिये की हल्की रोशनी में

पुरोहित ने उन दोनों का विवाह करवाया। वर उसके गले में मंगलसूत्र बाँधनेवाला था कि सुजाता ने सिर उठाकर देखा और कहा—"ये नहीं हैं।" अगले क्षण वह मूर्छित हो गई।

प्रातःकाल से पहिले दासीने जैसे तैसे सुजाता को घर पहुँचा दिया। उसके बाद दो सप्ताह तक सुजाता को जोर का ज्वर रहा। पुरन्दर उसका हाल चाल मालूम करने के लिए आया, पर वह उसकी दासी से भी बातचीत न कर पाया। किसी को न मालूम हुआ कि दुल्हा कहाँ था।

इतने में उस राज्य का पास के राज्य के साथ युद्ध हुआ। पुरन्दर ने उस युद्ध में भाग लिया। वह उसमें मारा गया।

सुजाता का ज्वर तो जाता रहा, पर वह पहिले की तरह स्वस्थ न हो सकी। उसका हृदय भारी था। इसके कुछ दिन बाद उसका पिता, उदयसेन भी मारा गया। उसकी सारी जमीन जायदाद सुजाता को मिली। कई बड़े बड़े लोग उससे विवाह करने के लिए आये। उसने विवाह के बारे में बातचीत करने से भी इनकार कर दिया। उसके हितैषियों ने कहा—"इस तरह कितने दिन रह पाओगी?" वह कहती—"मुझे नहीं मालूम।"

इतने में उस नगर में एक क्षत्रिय युवक आया। उसका नाम मिलिन्द था। क्योंकि उसने युद्ध में बहुत पराक्रम दिखाया था, इसलिए उसे राजा के यहाँ अच्छी नौकरी मिली। इस मिलिन्द ने सुजाता के बारे में सुन रखा था। उसने उससे परिचय कर लिया। उसकी दुःख भरी कहानी सुनकर पहिले उसे दया आई। बहुत ही सुन्दर है। समझदार है। एक मामूली युवक से विवाह किया। उससे

विवाह करने के लिए पिता न माना और वह युवक भी युद्ध में मारा गया। क्या यह काफ़ी नहीं है, किसी का दिल तोड़ने के लिए!

मिलिन्द की दया धीमे धीमे प्रेम में बदल गई। उसने एक दिन सुजाता से कहा—"जो हो गया है उसके बारे में क्यों शोक करती हो! मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। अगर मृत पुरन्दर को भूलकर तुमने मुझसे विवाह किया तो मैं तुम्हें किसी चीज़ की कमी न होने दूँगा। सब तरह के सुख दूँगा।"

"मुझे पुरन्दर को भूले बहुत दिन हो गये हैं। यदि आपको मुझ पर प्रेम है तो मैं अवश्य करूँगा।" उन दोनों का धूम-धाम से विवाह हुआ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, जो सुजाता ने किया वह अनैतिक है न? उसने एक से प्रेम किया। वह मर गया। उसको एक और से विवाह करना पड़ा। जाने वह भी कहाँ चला गया। उस हालत में यदि सुजाता अच्छे चरित्र की होती तो क्या मिलिन्द से विवाह करती? अगर तुमने जान बूझकर इन प्रश्नों का उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"सुजाता को उस दिन काली के मन्दिर में जिस व्यक्ति से विवाह करना पड़ा था, वह यह मिलिन्द ही होगा। नहीं तो वह उससे विवाह करने के लिए न मानती, जब कि वह औरों से विवाह के बारे में बातचीत करने को भी न मानी थी।" विक्रमार्क ने कहा।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

रात का भोजन करके हवा खाने बाबा आराम कुर्सी डालकर आँगन में पूर्णिमा का चान्द देख रहे थे। बच्चे उनके चारों ओर चटाई पर बैठे थे।

बाबा को क्या सूझी कि उन्होंने एक श्लोक सुनाया।

> "भाग्य फलति सर्वत्र
> न विद्या न च पौरुषम
> कूष्माण्डाभ्यन्तरे मुक्ता
> तुरुष्केण विलोकिता:"

"इसका मतलब क्या है बाबा!" बच्चों ने एक साथ पूछा।

बाबा ने सुंघनी निकाली। हाथ में लेकर उसे सूंघा। "पूछ रहे हो कि इस श्लोक का अर्थ क्या है? अच्छा, तो बताता हूँ, सुनो। हर जगह भाग्य ही चलता है। यह काफ़ी नहीं है कि विद्या हो या पौरुष हो। कद्दू में जो मोतियाँ रखी गई थीं, वह आखिर एक तुर्की को दिखाई दी।

"बाबा, कद्दू में मोती! कैसे बाबा! फिर तुर्की कौन है बाबा! यह कहानी क्या है जरा सुनाओ तो! हर बच्चे ने एक एक प्रश्न किया।

"यानी कहानी सुनाने के लिए कह रहे हो, तो सुनो।" बाबा ने कहा।

एक था राजा। नाम था विष्णुगुप्त और उसकी राजधानी का नाम व्याघ्रपुर था। वह बड़ा विचित्र था। वह कभी कभी यह देखा करता कि बड़े, बुज़ुर्गों की बात ठीक है कि नहीं।

एक दिन वह सो न सका। कुछ सोच रहा था कि उसे एक श्लोक याद आया। वह यह था :

"हरिणापि, हरेणापि,
ब्रह्मणापि, सुरैरपि,
ललाट लिखिता रेखा,
परिमाष्टुं न शक्यते।"

इसका अर्थ यों है—ब्रह्मा हो या विष्णु या ईश्वर, देवता ही सही, किसी के लिए भी माथे पर लिखा मिटाना सम्भव नहीं है।

यह ठीक है कि नहीं, यह जानने के लिए उस राजा ने क्या किया जानते हो? उसने एक कद्दू लिया। उसका गूदा निकाल दिया और उसके अन्दर उसने मोती रखवा दिये।

अगले दिन उसके पास जब एक ब्राह्मण आया तो उसने उस कद्दू को उसे दान दे दिया। उसी समय एक तुर्की भी उसके दर्शन के लिए आया। राजा ने उस तुर्की के हाथ में चार आने रखे।

वह ब्राह्मण और तुर्की एक ही रास्ते जा रहे थे। तब ब्राह्मण ने सोचा, "यह कद्दू मेरे किस काम का? भार ही तो है! घर में बहुत से कद्दू हैं भी तो!"

उसने तुर्की से कहा—"अरे भाई, अपनी चवन्नी दो और इस कद्दू को ले लो।"

तुर्की मान गया। उसने अपनी चवन्नी ब्राह्मण को दे दी और उसका कद्दू ले लिया। जब उसने घर जाकर कद्दू काटकर देखा तो फिर क्या था? उसमें मोती भरे हुए थे। तुर्की ने राजा के पास जाकर यह सब बताया।

"तुम्हारा भाग्य अच्छा है। तुम ही रखो उन मोतियों को।" राजा ने उस तुर्की से कहा।

"देखा, भाग्य का साथ होना चाहिए।" बाबा ने कहा।

गलीवर की यात्रायें
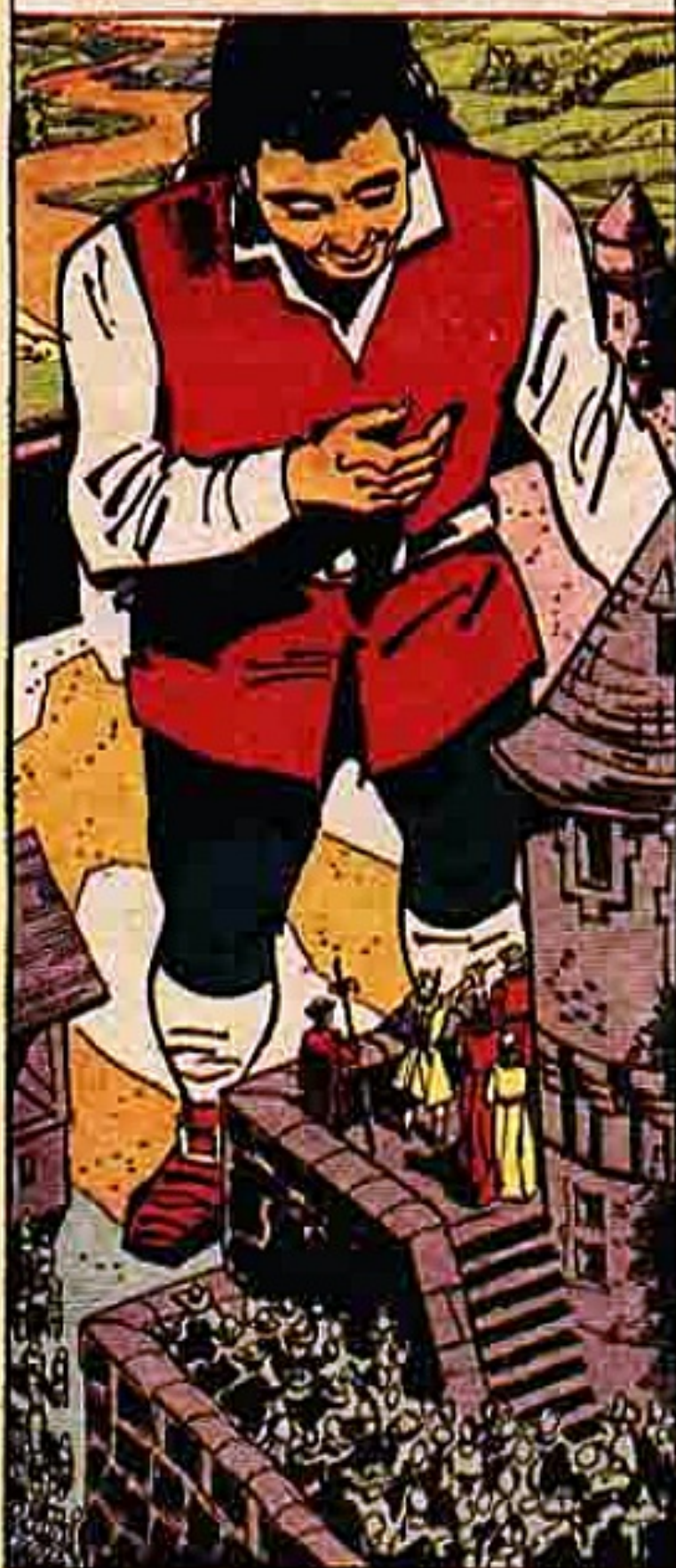
ब्लेफुस्कू राज्य में पहुँचते ही राजा अपने कर्मचारियों के साथ आया। मेरा स्वागत किया। मुझे देखने राज्य की सारी जनता आई।

शहर के बाहर एक पेड़ के नीचे मेरे रहने का प्रबन्ध किया गया। खाने-पीने की चीज़ें, गाड़ियों में लाकर दी गईं।

एक दिन मैं समुद्र के किनारे घूमने गया। दूरी पर एक बड़ी नाव दिखाई दी—वह लाख की बनी नाव न थी—सचमुच नाव थी।

तुरत राजा की अनुमति लेकर, मैं तैरता नौका की ओर गया—ब्लेफुस्कू राज्य की बीस छोटी नौकायें मेरे साथ आ रही थीं।

वास्तविक नाव देखकर मेरी जान में जान आई। नौका से रस्सियाँ बंधवाई और ब्लेफुस्कू के नाविकों को बन्दरगाह तक उसे खींचने के लिए कहा। मैंने पीछे से नाव को धकेलना शुरु किया। जैसे भी हो, उसे मैंने बन्दरगाह में पहुँचाया। वह शायद तूफ़ान में किसी जहाज़ से अलग होकर यहाँ बह आई थी

जब गौर से देखा तो नाव ठीक थी, पर उसका निचला हिस्सा कुछ खराब हो गया था।

बढ़इयों की सहायता से मैंने मस्तूल और चप्पू वगैरह भी बनवा लिये।

इधर सैकड़ों दर्जियों ने छोटे छोटे चीथड़ों को मिला-मिलाकर, एक पाल बनाया।

जब मैंने कहा कि मैं अपने देश चला जाऊँगा— तो तुरत राजा मान गया। टोकरों में मांस और पीपों में पेय लाकर मैंने नाव में रखवाये।

स्मरणार्थ, दो बैल, छः गौ, एक छोटा-सा बकरियों के झुन्ड भी नाव में चढ़वाया। राजा ने ब्लेफुस्कू राज्य के आदमियों को ले जाने को सख्त मनाई की।

इस बीच लिलिपुट राजा ने खबर भिजवाई कि यदि मैं तुरत वापिस न गया, तो देशद्रोही घोषित कर दिया जाऊँगा।

उसने राजा को भी यह आदेश दिया था कि मुझे रस्सियों से बाँधकर लिलिपुट देश वापिस भेज दिया जाय। पर राजा ने ऐसा न किया।

ब्लेफुस्कू राजा को मैंने कई तरह से अपनी कृतज्ञता दिखाई। उन्होंने योंही कहा—"हमारे लिये यह काफी है यदि तुम यहाँ से चले गये।"

मैं बड़े जोश में, नाव में जा बैठा। पाल लगाकर निकल पड़ा। तीन दिन तक इसी तरह-यात्रा करता रहा।

जब आखिर दूरी पर एक जहाज दिखाई दिया तो मेरे सन्तोष की सीमा न रही। मैं पागल की तरह चिल्लाया और ज़ोर से हाथ हिलाने लगा।

यह ब्रिटिश जहाज था। जहाज में मैंने असली आदमियों को देखा। उनसे मैंने जी-भर के अपनी भाषा में बातचीत की।

जहाज़ के कप्तान को यह दिखाने के लिए कि जो कुछ मैं कह रहा हूँ, वह सच है, मैंने जेब में से ब्लेफुस्कू राज्य के बैल, गौ और बकरियों को निकालकर दिखाया। उसे अपनी आँखों पर ही विश्वास न हुआ। आखिर उसे मेरा विश्वास हो गया। इस बीच एक चूहा, एक बकरी को उठा ले गया और उसे निगल गया।

जिस जहाज़ पर मैं चढ़ा था, वह मेरे देश की ओर जा रहा था। मैं अपने गाँव में पत्नी और बाल-बच्चों के साथ केवल दो महीने ही रह सका। हमेशा यही सपने देखता रहता था कि कब अपने गाँव जाऊँगा। पर अभी यहाँ दो महीने भी न हुए थे कि विदेश जाने की इच्छा होने लगी।

प्रसिद्ध ऐतिहासिक प्रदेश :

सुल्तान गंज

लेखक: गणेश प्रसाद चौधरी, भागलपुर (बिहार)

लगभग १५०० ई. में सुल्तान गंज एक भरा पूरा नगर था। जनता सुखी थी। गंगा के किनारे मुरली पहाड़ी है। इसपर कई मूर्तियाँ और शिलालेख हैं। गंगा के मध्य में अजगवीनाथ मंदिर है। यहाँ की जनता अमन चैन की जिन्दगी बसर कर रही थी। पर सुखी जनता को सताता आ पहुँचा काला पहाड़!

काला पहाड़ मुगल सम्राट अकबर के राज्य काल में बंगाल के विद्रोही अफ़गान सरदार दाऊद खाँ का प्रधान सेनापति था। कहा जाता है कि वह ब्राह्मण जाति का था। लेकिन उसने एक हरिजन लड़की से शादी कर ली। अत: समाज ने काला पहाड़ का तिरस्कार किया।

क्षुब्ध हो काला पहाड़ ने दाऊद खाँ के यहाँ शरण ली। वह मन्दिरों को देखना नहीं चाहता था। इसलिए काला पहाड़ को उसने सेनापति बना उसे सैन्य शक्ति दे मन्दिरों को नष्ट करने के लिये भेजा। वह हजारों मन्दिरों को नष्ट करता सुल्तान गंज आ पहुँचा। यहाँ उन्होंने विक्रमशिला महा विद्यालय को विध्वस्त कर अनेकों मंदिरों को तोड़ा। अन्त में मुरली पहाड़ी एवं उस पर स्थित मंदिर को तोड़ डाला, जिसका प्रमाण अभी भी चट्टानों पर खुदी भग्न मूर्त्तियाँ दे रही हैं। अजगवीनाथ मंदिर पर आया और वहाँ के शिवलिंग को उसने तोड़ना चाहा तो मठाधीश महात्मा हरनाथ भारती ने उसे रोका। लेकिन काला पहाड़ न माना। अन्त में महात्मा ने कहा कि तुम्हारे बादशाह ने इस मन्दिर की शक्ति पर रीझ कर इसे न तोड़ने का आदेश दिया है। इस पर काला पहाड़ ने बादशाह का आदेश पत्र देखना चाहा। महात्माजी ने दो घंटे का समय मांगा आदेश पत्र दिखाने के लिये। काला पहाड़ के मान जाने पर वह शीघ्र ही अपने योग बल से बादशाह के पास पहुँच गया दिल्ली! कुछ लोगों का विश्वास है कि वे मन्दिर वाली गुफ़ा से ही बादशाह के पास पहुँचे थे क्योंकि गुफ़ा अभी तक है। कहा जाता है यह दिल्ली तक गई है। बादशाह के पास पहुँचते ही उसने काले पहाड़ का सारा वृत्तान्त कह डाला। बादशाह ने महात्माजी की परीक्षा लेनी चाही और कहा कि "अगर आप में शक्ति है तो कुएँ के ऊपर चादर बिछाकर उस पर लेट जाइये।" महात्माजी ने अपने तपोबल से ऐसा ही कर दिखाया! उनसे और भी तरह तरह की परिक्षाएँ ली गईं। लेकिन वे सब में सफल रहे। अन्त में बादशाह ने तुरन्त एक ताम्रपत्र पर अजगवीनाथ के शिवलिंग और मंदिर को नहीं तोड़ने का आदेश लिखवा दिया। ताम्रपत्र लेकर महात्माजी लौट आये। काला पहाड़ आदेश पत्र देखते ही चुपचाप लौट गया और बाबा अजगवीनाथ का मंदिर क्षत विक्षत होने से बच गया। कहते हैं जब तक महात्माजी अनुपस्थित रहे तबतक मधुमक्खियाँ पर्वत के चारों ओर लड़ती रहीं जिससे एक भी आक्रमणकारी मन्दिर में प्रवेश नहीं कर पाया।

चीन में एक महावीर रहा करता था। वह सब अस्त्रों के उपयोग में प्रवीण था। वह बलहीनों की बलवान दुष्टों से रक्षा किया करता।

एक बार वह अपनी तलवार और धनुष बाण लेकर, घोड़े पर सवार हो राजधानी के लिए रवाना हुआ। वह दिन-भर सफ़र करता और रात किसी पड़ाव पर काट देता। इस तरह कुछ दिन यात्रा करने के बाद ऐसा हुआ कि वह रास्ता भटक गया। अन्धेरा होने लगा पर पड़ाव कहीं पास नहीं दिखाई दिया। इसलिए उस वीर ने एक गाँव में रात बिता देने की ठानी।

उस गाँव में एक घर का बाहर का दरवाजा खुला था। घर के अन्दर से दिये की रोशनी दिखाई दे रही थी। उस घर के सामने घोड़ा रोका। वह उतरा। घोड़े को चलाता, वह घर के आँगन में घुसा। उस आँगन में सिवाय तीन पत्थरों के कुछ न था। आँगन से परे तीन बड़े कमरे और उनके दोनों ओर दो और कमरे थे। एक बुढ़िया घर के बीच बैठी कुछ कात रही थी।

घोड़े की आहट सुनकर वह उठकर आई और उस महावीर से पूछा कि वह किस काम पर आया था।

"मैं रास्ता भटक गया हूँ। क्या आज रात सोने के लिए कुछ जगह दे सकोगी?" महावीर ने पूछा।

"जगह देना और न देना बेटा, मेरे बस की बात नहीं है।" उस बुढ़िया ने कहा।

"घर में क्या कोई मर्द नहीं है? क्या आप अकेली हैं?" महावीर ने उससे पूछा।

इन्दु भटनागर

"मैं विधवा हूँ, बेटा, मेरा एक लड़का है, वह व्यापार पर हमेशा घूमता रहता है।" बुढ़िया ने कहा।

"फिर आपकी बहू कहाँ है?" वीर ने पूछा।

"क्या पूछते हो बेटा! वह तो गल्ती से स्त्री पैदा हुई है। उसका मुकाबला मर्द भी क्या करेंगे! बड़ी डील डौल है। बड़ी गुसैल भी। छोटी छोटी बात पर लाल पीली होती है। अगर वह चाहे तो मुझे अभी मार सकती है। इसलिए मुझे बहुत दब दबाकर रहना पड़ता है। फिर भी वह मुझे हमेशा कोसती कुढ़ती रहती है। इसलिए ही मैंने कहा था कि मैं तुम्हारी इच्छा पूरी न कर सकूँगी।" बुढ़िया ने आँसू पोछते हुए कहा।

यह सुन वह महावीर गरज उठा।

"यह भी क्या बात है! बड़ा अन्याय है। वह चुड़ैल है कहाँ? मैं तुम्हारी उस चुड़ैल से मदद करूँगा।" महावीर ने कहा।

उस असहाय बुढ़िया की रक्षा करने का उसे अच्छा अवसर मिला। उसने अपना घोड़ा एक पत्थर से बाँध दिया और तलवार लेकर खड़ा हो गया।

"यह न करो बेटा, यह तुम न कर पाओगे। तुम हमारी बहू के बारे में नहीं जानते हो? वह स्त्रियों के काम तो जानती वानती नहीं है, परन्तु रोज वह जंगल जाती है, ईन्धन तो लाती ही है और अकेली ही बिना किसी की सहायता के वह एक जन्तु भी मार लाती है। उसको बेच बाचकर जो कुछ मिलता है, हम उसी पर गुज़ारा कर लेती हैं। इसलिए मैं उसे गुस्सा दिलाना नहीं चाहती।" बुढ़िया ने कहा। बुढ़िया के यह कहते ही वीर ने तलवार म्यान में रख ली।

"मैंने जीवन भर असहायों की दुष्टों से सहायता करने का बीड़ा उठाया है। पर चूँकि तुम कह रहे हो कि तुम्हारा गुज़ारा बहू पर निर्भर है इसलिए मैं उसे नहीं मारूँगा। मगर उसे खूब पीट पाटकर उसकी अक़्ल ठिकाने कर दूँगा।" वीर ने कहा।

थोड़ी देर में वहाँ बहू आ ही गई। उसने पीठ पर से एक बड़े शेर को उतारकर नीचे फेंका—"ओ बुढ़िया, दिया लाकर इसे अन्दर ले जाओ।" वह ज़ोर से चिल्लाई।

बुढ़िया दिया लाई। उसकी रोशनी में जब उसने शेर देखा, तो वह डर गई! वीर भी उस शेर को देखते ही डर गया।

"यह घोड़ा कहाँ से आया है!" बहू ने सास से पूछा।

वीर ने आगे आकर कहा—"यह घोड़ा मेरा ही है। मैं राजधानी की ओर जा रहा था कि रास्ता भटक गया। जब मैं आपके गाँव में पहुँचा तो अन्धेरा हो गया। जब मैंने देखा कि इस घर के दरवाजे खुले हैं, तो सोचा कि क्यों न जाकर पूछकर देखूँ कि रात यहाँ काटने देंगे कि नहीं।

"अतिथि आये हैं, उनका सत्कार करना तो अलग, हमारी सास ने उसको बाहर ही खड़े किये रखा ! आप उसको माफ़ कीजिये। आज मेरा इस शेर से बड़ा युद्ध हो गया। इसको मारकर लाने में कुछ देरी हो गई। मुझे इसका अफ़सोस है कि आपका ठीक सत्कार नहीं हुआ।" बहू ने कहा।

"आप इसकी चिन्ता न कीजिये।" वीर ने कहा। उसे लगा कि बहू काफ़ी शिष्ट थी। उसने जल्दी ही उसको शेर का माँस बनाकर परोसा। भोजन बढ़िया था। उसने बड़े विनयपूर्वक कहा—"हमारा रुखा सूखा खाना देखकर बुरा न मानिये।"

"वाह, आप भी क्या कह रही हैं, भोजन तो बड़ा अच्छा था।" वीर ने कहा।

भोजन के बाद उसने बहू से कहा—"देखो, तुम बड़ी ताकतवर और समझदार माल्म होती हो फिर भी तुम बड़ों को आदर की दृष्टि से नहीं देखती हो। इसका क्या कारण है?"

यह सुनते ही बहू ने इस तरह पुकारा जिस तरह कि कुचले जाने पर साँप
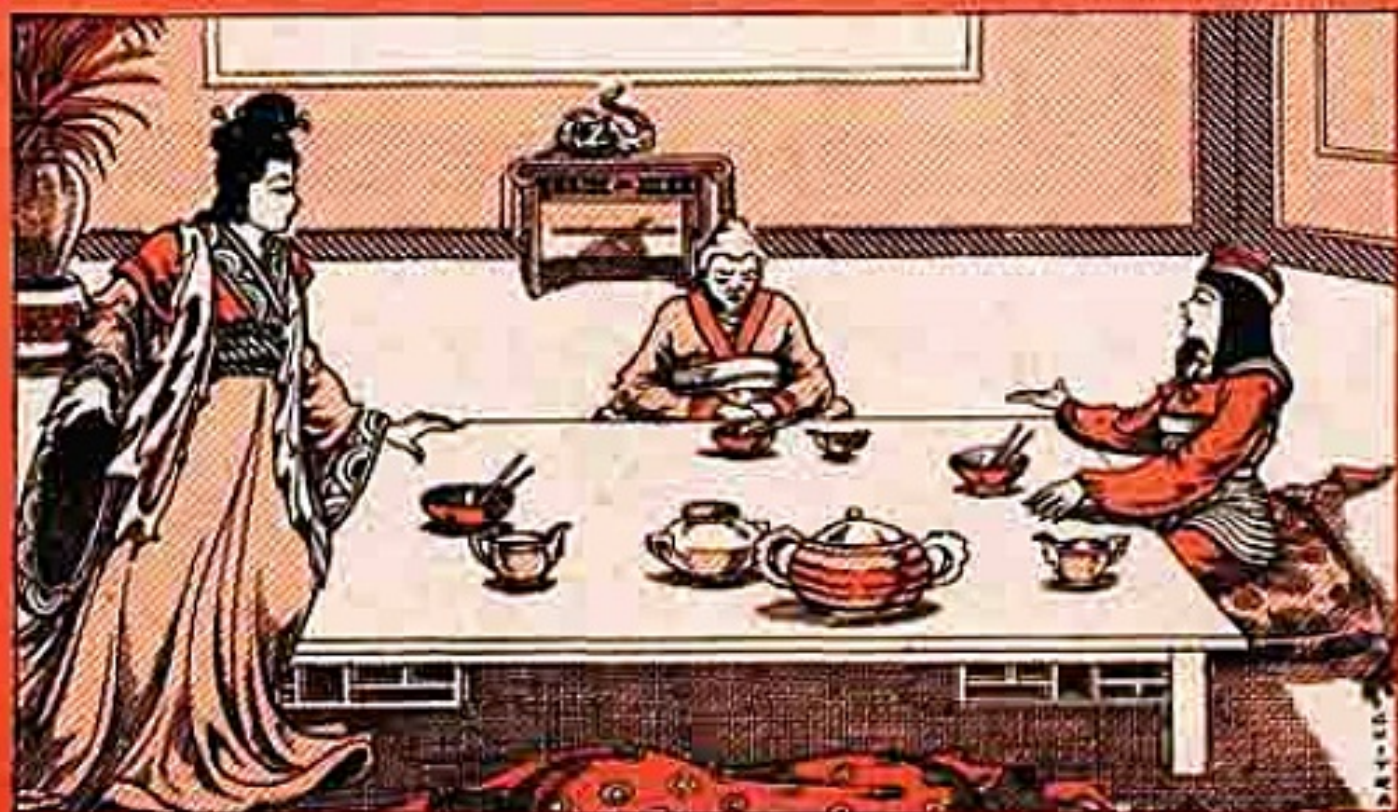
फुंकारता है—"क्या! इस बुढ़िया ने क्या कह दिया है!"

"तुम यों न कहो। उसने मुझ से कुछ नहीं कहा है। पर यह देख कि तुम मान-मार्यादा से परिचित हो, शिष्ट हो, पर मुझे ऐसा लगा कि तुम अपनी सास को उचित आदर नहीं दे रही हो। इसलिए ही मैंने यह पूछा।" वीर ने कहा।

उसने एक हाथ में दिया लिया दूसरे हाथ से उसने योद्धा को पकड़ा, उसको खींचती, बाहर आँगन में ले गई। उसने कहा—"वहाँ खड़े हो। मुझे तुमसे कुछ कहना है।"

बड़े पत्थर पर पड़े पत्थर को एक अंगुली से खरोंचते हुए उसने कहा—"फलाँ दिन यह हुआ। फिर एक दिन ऐसा हुआ। फिर एक और दिन यों हुआ। बताओ, गल्ती उसकी है या मेरी?" उसने पत्थर पर फिर खरोंचा। तीनों बार एक एक अंगुल गहरी लकीर उस पर खिंच गई। वीर यह देखते ही भौंचक्का रह गया। उसे लगा कि वह बड़ा दुर्बल है।

"अब सन्देह की क्या आवश्यकता है, तीनों बार गल्ती आपकी सास की ही है।" वीर ने कहा।

"यही मैं चाहती हूँ।" कहती बहू उठी। उसके सोने के लिए वराण्डे में बिछौना बिछा दिया। उसके घोड़े को दाना पानी देकर वह जाकर सो रही।

वीर का अनाथ, असहायों की रक्षा करने का उद्देश्य जाता रहा। वहाँ जीवित बाहर निकल सका था, इसलिए उसने भगवान को लाख लाख दुआयें दीं। घोड़े पर सवार होकर वह अपने रास्ते चला गया।

समझदार घोड़ा

पाल्तू जानवरों में घोड़ा बहुत अक़्लमन्द है। वे कुत्तों की तरह हमेशा सेवा भले ही न करें, पर मौका मिलने पर वे किस प्रकार उपकार करते हैं—यह कहानी सूचित करती है। यह कल्पित कहानी नहीं है। यह उन दिनों की बात है जब अमेरिकन ब्रिटेन के विरुद्ध विद्रोह कर रहे थे। उस युद्ध में यह घटना हुई थी।

अमेरिका के कनेटिकट राज्य में मोज़ेज गुडदेन नाम का लड़का हुआ करता था। उसके पास लाल घोड़ा था। उसका नाम जेनी था। मोज़ेज गुडदेन की एक स्त्री मित्र थी। उनका नाम अमी सेण्टर था। उन दोनों की करीब-करीब एक ही आयु थी। दोनों जेनी को बड़े प्यार से देखा करते।

मोज़ेज ने, जब वह बारह साल का था, जेनी को एक बात सिखायी। उसे दिखाने के लिए वह अपने घोड़े पर सवार होकर अमी के घर गया। उसे बाहर आने के लिए बुलाया। वह आई। मोज़ेज अपनी चाबुक से बाड़ पर ताल देता जाता था और जेनी अपने पैर उठाकर, लय के अनुसार नृत्य करता जाता था।

हमारे देश में कई ऐसे घोड़े हैं, जो बेन्ड के संगीत पर नृत्य करते हैं। कभी-कभी विवाह के जलूस में, इनको सजा-धजा कर इनका प्रदर्शन किया जाता है। पर अमी इस तरह के घोड़ों के बारे में नहीं जानती थी। उसने मोज़ेज से कहा—"जब तुम बड़े हो जाओ तो इस घोड़े को सरकस में भरती करवा देना और सारे संसार में घुमाकर लाना।"

परन्तु जेनी को सरकस में भरती तो नहीं किया गया, लेकिन उसने इससे बड़ा ही काम किया। कुछ वर्ष बीत गये। अमेरिका

के तेरह राज्यों ने स्वतन्त्रता घोषित कर दी और ब्रिटेन से युद्ध करना शुरु किया। स्वतन्त्रता के योद्धाओं का सेनापति जोर्ज वाशिन्गटन था। अमी का पिता भी इन योद्धाओं में था। मोज़ेज भी इस सेना में प्रविष्ट हुआ और लेफ़्नेन्ट के पद पर काम करने लगा।

स्वतन्त्रता प्रिय स्त्रियाँ भी इस सेना की यथाशक्ति सहायता कर रही थीं। अमी हमेशा सूत कातने में, बुनने में, स्वतन्त्रता के वीरों के लिए आवश्यक ऊनी वस्त्रों के बनाने में व्यस्त रहती।

मोज़ेज का काम सैनिकों से मैदान में कवायद करवाना था। अब उसके पास जेनी पर सवार होकर, घूमने फिरने का समय न था।

१७७७ के सरदियों की बात है। वाशिन्गटन के सैनिक ठँड और भूख के सताये हुए थे, बहुत से बीमार थे। उनको धन की आवश्यकता थी। हार्टफर्ड के लोगों ने चन्दा इकट्ठा किया। सब ने यथाशक्ति सेना के लिए धन दिया। बहुत सा सोना-चान्दी जमा हो गया। इस चान्दी को वाली फोर्ज नामक स्थल पर पहुँचाना था। इस काम को करने के लिए कौन साहस कर सकता था? मोज़ेज इस चान्दी को ले जाने के लिए मान गया। वह जाने से पहिले अमी से विदा लेने गया। वह सन्तुष्ट थी कि उसका मित्र साहस करके यह करने जा रहा था। पर उसे सन्देह था कि यह काम निर्विघ्न रूप से हो सकेगा कि नहीं।

"अकेले हो। घोड़े पर इतना चान्दी ले जाना शायद खतरनाक है। रास्ते में लाल कोटवाले दिखाई देंगे।" उसने कहा।

"लाल कोट" से मतलब ब्रिटिश सैनिक था।

"खतरा तो है, पर सेना को इस धन की बहुत अवश्यकता है। अगर वह पहुँचा दिया गया, तो जेनरेल वाशिन्गटन बहुत खुश होगा।" मोज़ेज ने कहा।

मोज़ेज ने फौजी वरदी नहीं पहिनी। कुछ पुराने कपड़े पहिन लिये। यह अनुमान करना मुश्किल था कि घोड़े पर इतनी चान्दी लदी थी। पर जेनी ही "लाल कोट" वालों की दृष्टि आकर्षित कर सकता था। जब इतना अच्छा घोड़ा दिखाई देगा, तो शत्रु उसको लेने के लिए अवश्य कोशिश करेंगे। सचमुच खतरे का कारण तो यही था।" अमी ने बताया।

मोज़ेज ने हँसकर कहा—"मैंने इस बारे में सोचा है। पर उस खतरे से भी बचा जा सकता है। जेनी ने एक और बात सीखी है। वह अब इस सफ़र में काम आयेगी।" मोज़ेज ने मगर यह न बताया कि उसने कौन-सी बात सीखी थी। उसने कहा कि वह उसे बाद में बतायेगा।

अमी से बिदा लेकर, मोज़ेज घोड़े पर सवार होकर चला गया। जब वह नदी के किनारे पहुँचा, तो उसने घोड़े को किनारे किनारे कुछ दूर चलाया। फिर उसने घोड़े को कीचड़ में उतारा, उसे तब तक चलाता रहा, जब तक उसपर और अपने पर खूब कीचड़ उछल न गया। फिर वह सड़क पर आया।

इस यात्रा में यह न सम्भव था कि जहाँ चाहे, वहाँ वह पड़ाव कर सके। लोगों में कई ऐसे थे, जो स्वतन्त्रता के समर्थक थे, कई ऐसे जो विरोधी थे। उन लोगों की सूची मोज़ेज के पास थी, जो समर्थक थे। इन समर्थकों के घर,

आराम करता, मोज़ेज चलता जाता था। पहिले दिन किसी प्रकार का विघ्न न हुआ। परन्तु दूसरा दिन पहिले दिन की तरह अच्छा न रहा। रास्ते में लाल कोटवालों के दल दो बार दिखाई दिये। दोनों बार वह अपने घोड़े को लेकर, छुप छुपा गया। एक बार तो वह पुल के नीचे छुपा और दूसरी बार घास फूस के ढेर के पीछे।

दूसरे दिन रात "बेल एन्ड केन्डल" नामक होटल में वह ठहरा। उसका मालिक स्वतन्त्रता का पक्षपाती था। उस दिन वहाँ दो शत्रु सेनाधिकारी भी ठहरे हुए थे। इसलिए नौकरों ने जेनी को और घोड़ों के साथ नहीं बाँधा। यद्यपि उसपर कीचड़ पड़ा हुआ था, पर देखने से ही मालूम हो जाता था कि वह अच्छी नस्ल का घोड़ा था। शत्रु सेनाधिकारियों ने भोजन कक्ष में मोज़ेज को देखा तो, पर उनको किसी प्रकार का सन्देह न हुआ। वह रात को चान्दी के थैलों को सिर के नीचे रखकर सो गया।

चौथे दिन दुपहर के बाद मोज़ेज न्यूयार्क नगर पहुँचा। वह एक गली में

रुका था और रास्ता पूछ रहा था कि उसने देखा कि दो "लाल कोट" सामने के घर से बाहर आये। उनमें से एक ने जेनी की लगाम पकड़कर कहा—"यह घोड़ा, मेरे टट्टू से तो बहुत अच्छा है।"

"मेरे घोड़े से भी" दूसरे ने कहा। उस घोड़े को कौन ले, यह निर्णय करने के लिए—एक सिक्का निकाल कर फेंका।

"यह तो फाल्तू घोड़ा है। आप क्या करेंगे? इतना खराब है कि किसी खन्दक में गिरा-विरा देगा।" मोज़ेज ने कहा।

"हम क्या कोई मूरख है? इसमें कोई खराबी नहीं है।" एक लाल कोट ने कहा।

"खराबी कभी कभी आती है। मुझे ही गिरा देता है। मैं क्योंकि बोझ ढोता हूँ इसलिए कोई बात नहीं और आप तो सम्राट के सैनिक हैं।" मोज़ेज ने विनयपूर्वक कहा।

"अबे, इधर उधर की बकवास न कर। पहिले घोड़े से उतरो।" एक लाल कोट ने धमकाया।

मोज़ेज ने घोड़े से उतरते हुए जेनी को कोई इशारा किया। लाल कोट ने जेनी
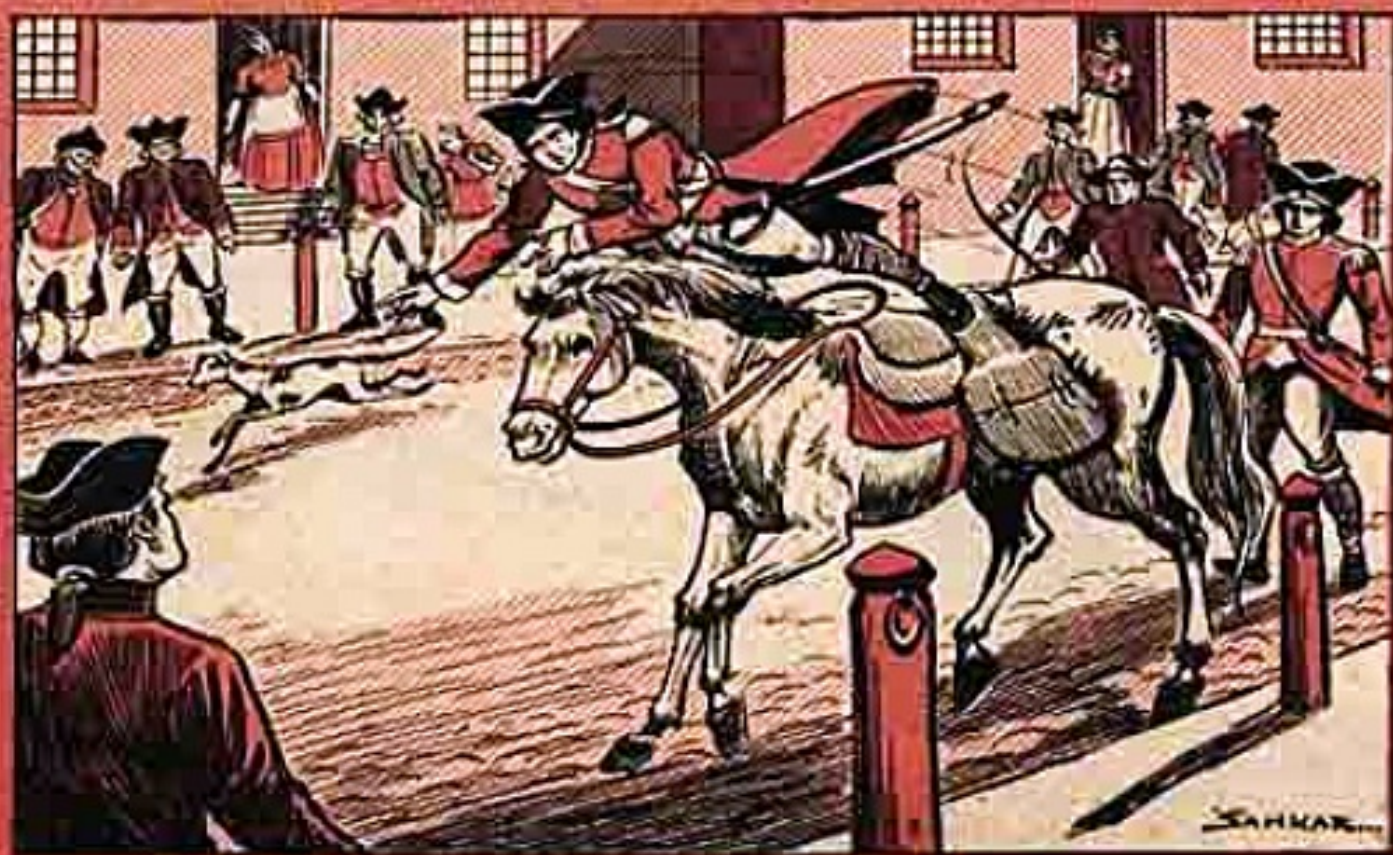
पर सवार होकर लगाम हिलाई। जेनी ज़ोर से भागा और यकायक रुक गया। इस तरह लंगड़ाने लगा, जैसे अगले पैर को चोट लग गई हो। लाल कोट आगे गिर गया। लोग जमा हो गये—"कहाँ है, मैं तो ज़रा देखूँ!" कहता दूसरा लाल कोट जेनी पर सवार हुआ। एक का तो अपमान के कारण मुँह लम्बा हुआ ही हुआ था और अब दूसरा सड़क की बगलवाली गन्दी नाली में जा गिरा। पहिले लाल कोट ने मोज़ेज से कहा—"जा, अगर तुम और तुम्हारा यह घोड़ा फिर दिखाई दिया तो देखना कि हम क्या करते हैं!"

आफ़त टल गई थी। मोज़ेज तुरत घोड़े पर सवार नहीं हुआ। उसे कुछ दूर चलाकर ले गया। गली के मोड़ के बाद उसने पीछे मुड़कर देखा कि कोई पीछा नहीं कर रहा था। तब वह घोड़े पर सवार हुआ। अगले दिन वह धन लेकर सुरक्षित वाली फोर्ज पहुँचा।

उस धन के कारण स्वतन्त्रता सेना का बहुत फायदा हुआ। खाना, कम्बल, जूते वगैरह तो मिले ही, इससे यह भी मालूम हुआ कि साधारण जनता उनका समर्थन कर रही थी। इससे उनमें नया उत्साह आया। मोज़ेज, जब तक विजय न प्राप्त हुई, तब तक वह स्वतन्त्रता के युद्ध में भाग लेकर, घर वापिस आया। घोड़े और उसके मालिक को बहुत-से उपहार मिले।

१७७९ में मोज़ेज और अमी का विवाह हुआ। उनके बारह बच्चे हुए। उनके वंशजों में अब भी वे थैले सुरक्षित हैं, जिन्हें मोज़ेज ले गया था।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

नवम्बर १९६० :: **पारितोषिक १०)**

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, सितम्बर '६० के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता,
चन्दामामा प्रकाशन,
वडपलनी, मद्रास - २६.

सितम्बर – प्रतियोगिता – फल

सितम्बर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **रघुपति राघव राजाराम !**

दूसरा फ़ोटो : **अल्ला, ईश्वर तेरे नाम !!**

प्रेषक : **रणवीरसिंह चौहान,**

C/o श्री विजयसिंह चौहान, पोलिस सब-इन्स्पेक्टर, मीरचौक पोलिस स्टेशन-हैदराबाद.

१. हरिचन्द पुरी, २३९/५१०, पंचमीर, जलन्धर

क्या श्री शंकर और चित्रा मुझे भी अपने जैसी चित्रकला सिखा सकते हैं। यदि हाँ तो कैसे ?

आप जलन्धर में, वे मद्रास में। शिक्षण कठिन ही है। मगर आप चित्रकला सीख अवश्य सकते हैं। "चन्दामामा" में उनके बनाये हुए चित्र देखिये, प्रेरणा पाइये, नहीं तो अनुकरण ही कीजिये, आप में प्रतिभा होगी तो सीख ही जायेंगे।

२. सुविमल प्रधान, विद्यार्थी, वाजा लाइन, खड्गपुर

नेपाली और बंगाली भाषा में चन्दामामा क्यों नहीं छपा करते ?

नेपाली के बारे में तो फिलहाल कहा नहीं जा सकता, पर आवश्यक समर्थन मिलने पर, किसी दिन बंगला में प्रकाशित करने का अवश्य विचार है।

३. गुरुवचन सिंह बी. ए. गवर्नमेन्ट कालेज, रोपड़, ईस्ट पंजाब

"मैंने तीन बार आपको अपनी रचना भेजी आपने एक बार भी प्रकाशित न की, क्या आप केवल अपने मित्रों या सम्बन्धियों की रचनायें ही प्रकाशित करते हैं ?

हम कहानियों के चयन व प्रकाशन के बारे में व्यक्तियों का ख्याल नहीं करते, सामग्री का ख्याल करते हैं, इसलिए आपका सन्देह गलत है। पाठकों और ग्राहकों की कृपा है, कि रोज डाक से सैकड़ों रचनायें आती हैं, कहना न होगा कि सब रचनाओं को "चन्दामामा" में स्थान देना असम्भव है।

४. देविन्दर सिंह "सन्धोत्रा" नरसिंहवान ब्रानपुर, बर्द्धमान, पश्चिमी बंगाल

शेक्सपियर की कुछ उन पुस्तकों के नाम बताइये जो हिन्दी में हों ?

अब तो करीब करीब शेक्सपीयर का सारा साहित्य हिन्दी में अनूदित व प्रकाशित हो चुका है। आपके यहाँ भी मिलेगा, कोशिश कीजिये।

५. नारायण प्रसाद अग्रवाल, गमला हाई स्कूल, (रांची) बिहार

वृक्ष, वास, तथा टाइगर के विषय में जो आप चित्र कथा लिखते हैं, सो कल्पित हैं या नहीं?

कल्पित हैं।

आप "चन्दामामा" में ऐसी कहानियाँ प्रकाशित क्यों करते हैं, जो दूसरी किताबों में प्रकाशित हो चुकी हैं?

दो उद्देश्यों से। ताकि "चन्दामामा" के पाठक प्रसिद्ध पुस्तकों से परिचित हो सकें। पर प्रसिद्ध पुस्तकों को प्रायः बच्चे नहीं पढ़ पाते। इसलिये हम उनको उसी भाषा में देने का प्रयत्न करते हैं जिसे बच्चे पढ़ सकें, बच्चे स्वयं ऐसा करने लगे, यह हमारा दूसरा उद्देश्य है।

६. श्यामलाल अग्रवाल, पंखड़ा, (पूना)

आप "चन्दामामा" में "पढ़ो और हंसो" का एक स्तम्भ क्यों नहीं देते?

हम "चन्दामामा" में व्यंग्य चित्र देते हैं, चित्र कथा भी एक तरह की हास्य कथा है। यदा कदा और भी चीज़ें दी जाती हैं, जिसे हास्य सामग्री समझा जा सकता है—हाँ अलग स्तम्भ पर भी सोचेंगे।

७. प्रताप अग्रवाल, प्रताप सर्विस स्टेशन सिलिगिरि, डार्जीलिन्ग

धारावाहिक कहानियाँ जैसे "गलीवर की यात्रायें" "काँसे का किला" आदि संयुक्त रूप में क्या एक ही साथ मिल सकती हैं?

"चन्दामामा" में ही। पुस्तकें यदि छपेंगी भी तो सम्भवतः अलग अलग ही छपेंगी।

८. रामकुमार प्रसाद स्वराज्य, पुरी रोड़, मखलौटगंज गया, बिहार

"क्या चन्दामामा" का ग्राहक बनने के लिए कुछ एडवान्स देना होता है?

कुछ नहीं।

"चन्दामामा" सब से ज्यादा किस भाषा में बिकता है?

हिन्दी में।

९. अशोक कुमार सहगल, कोलोनी आग्रा, रजाई

"गलीवर की यात्रायें" तथा "एलिस अद्भुत देश में" के मूल लेखक कौन हैं?

पहिले के स्विफ्ट।

दूसरी के लुई केरोल।

चित्र - कथा

एक रोज़ दास और वास नहर में नहा रहे थे। किनारे पर उन्होंने जो टोपी उतारकर रखी थी, उसे एक बकरी ने उठाकर खा ली। जब गड़रिये से पूछा तो उसने कहा—"वह बकरी, जो कोई चीज़ हरी देखती है, उसे खा जाती है। मैं क्या करूँ!" अगले दिन वास अपनी टोपी "टाइगर" के सिरपर रख नदी में उतरा। "टाइगर" के पास बकरी आई। उसने टोपी खानी चाही। पर "टाइगर" ने उसका गला पकड़ लिया। बकरी भागी, गड़रिया भागा। दास और वास यह देखकर हँसे।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

LIFEBUOY
SOAP

आधुनिक यन्त्र
और कुशल
कार्य - कर्ताओं से
सुसज्जित,
सुव्यवस्थित
बृहत संस्था
PRASAD
PROCESS
आफ़सेट प्रिन्टर्स

"मुझे खुशी है कि जिस
कपड़े का मैने पैंट बनवाया वह है
बिन्नी का जीन
क्योंकि वर्षों धोबी की पिटाई में भी
वैसे ही बने रहते हैं !"
दि बकिंघम एण्ड कर्नाटक कम्पनी लिमिटेड
दि बंगलोर वुलन, कॉटन एण्ड सिल्क मिल्स कम्पनी लिमिटेड
मैनेजिंग एजेन्ट्स : बिन्नी एण्ड कम्पनी (मद्रास) लिमिटेड

Photo by Pranlal K. Patel
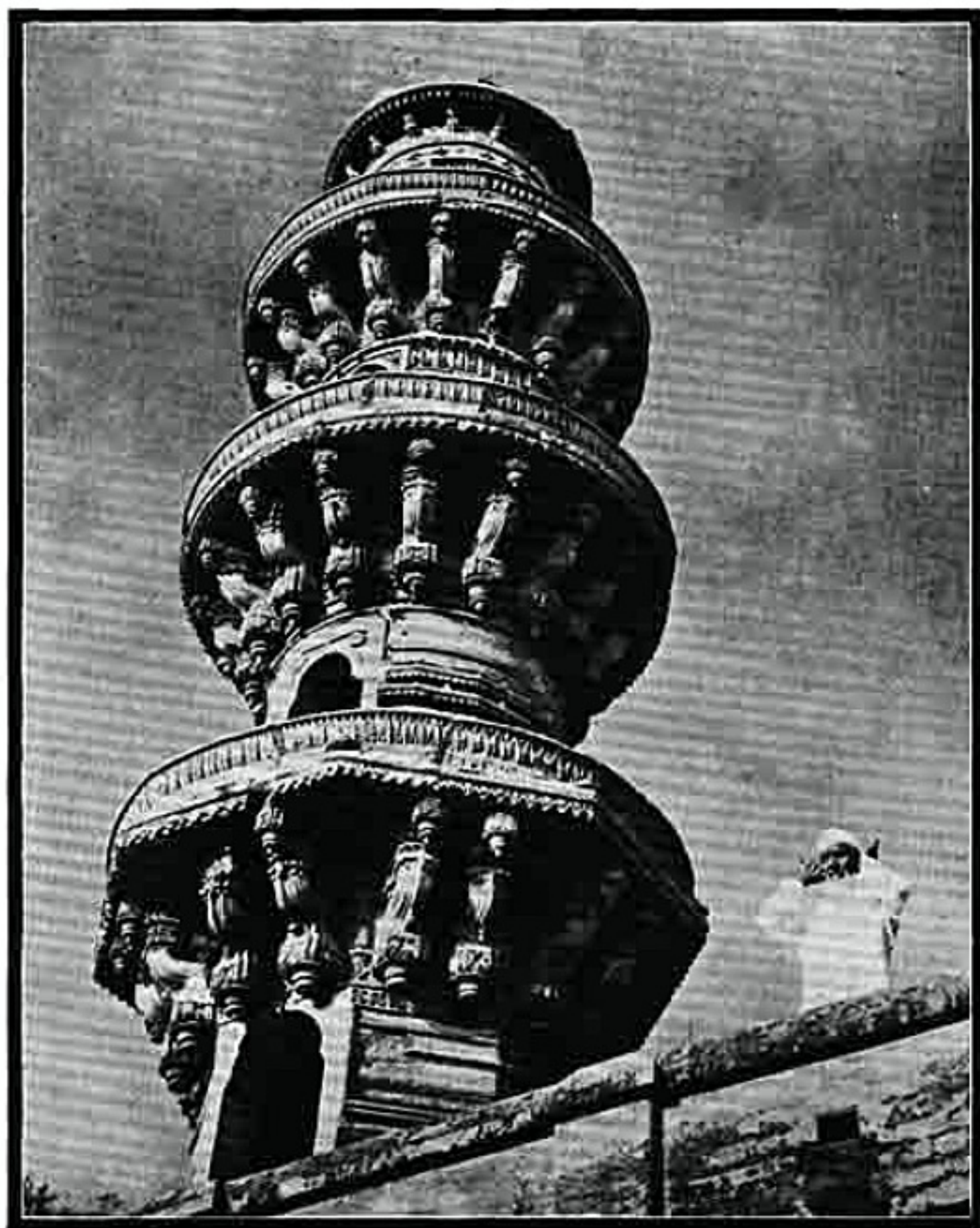
पुरस्कृत परिचयोक्ति

अल्ला, ईश्वर तेरे नाम !!

प्रेषक: रणवीरसिंह चौहान-हैदराबाद

मार्कोपोलो की साहसिक यात्रायें